Downloaded from https:// www.studiestoday.com

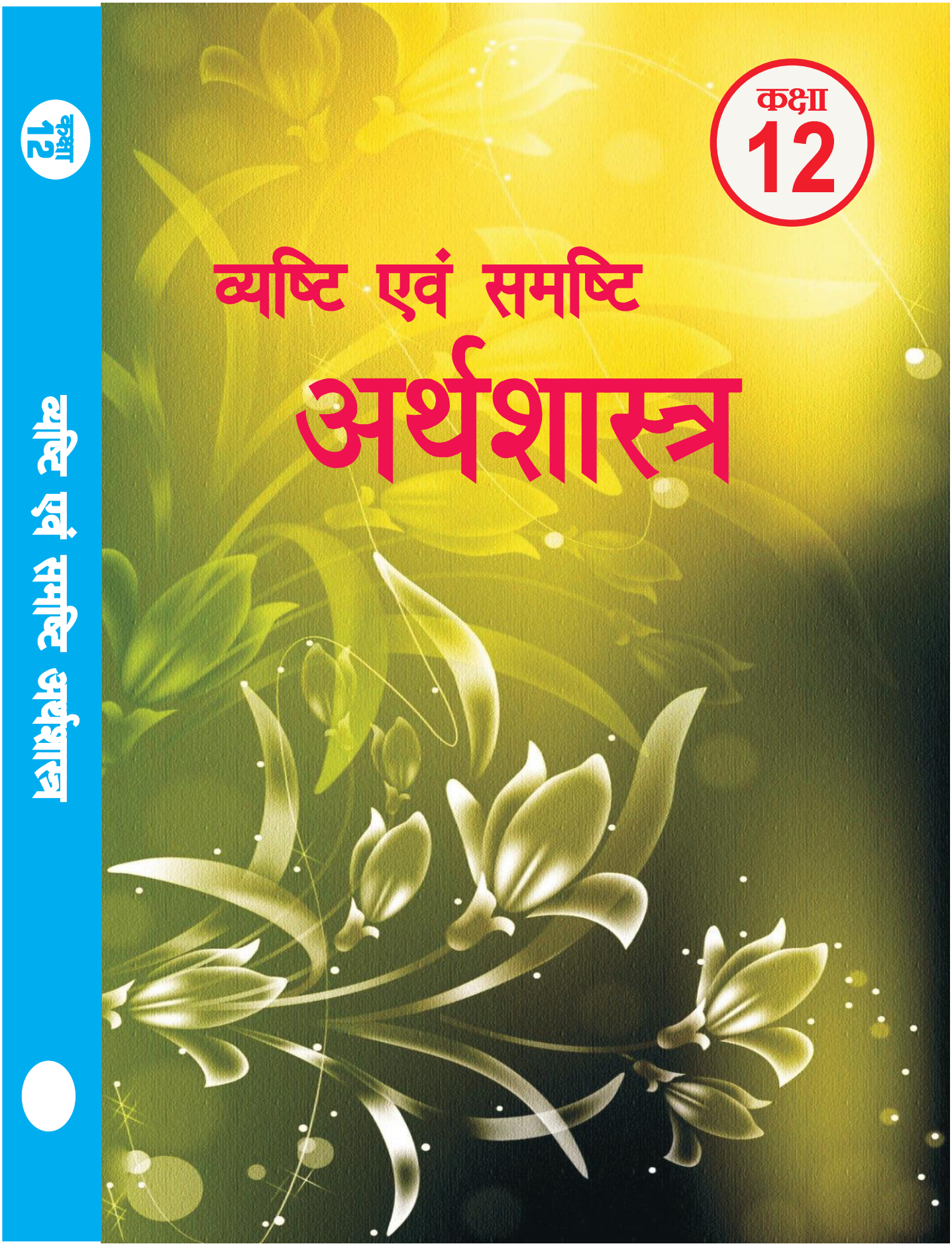

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

व्यष्टि एवं समष्टि–अर्थशास्त्र

(Micro and Macro Economics)

कक्षा – 12

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

पुस्तक : व्यष्टि एवं समष्टि–अर्थशास्त्र

कक्षा – 12

संयोजक :–

डॉ. रश्मि भार्गव, वरिष्ठ व्याख्याता
अर्थशास्त्र विभाग,
एस.पी.सी. राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

लेखकगण :–

1. **डॉ. रमेश चन्द्र कीर,** वरिष्ठ व्याख्याता
विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग,
श्री मा.ला.व. राज. महाविद्यालय, भीलवाड़ा

2. **डॉ. हेमेन्द्र अरोड़ा,** व्याख्याता
अर्थशास्त्र विभाग,
राज. एम.एस. महाविद्यालय, बीकानेर

3. **श्री टीकम मीणा,** प्रधानाचार्य
राज. उच्च मा. विद्यालय, धणा (पाली)

4. **श्री सतीश कुमार गुप्ता,** प्रधानाचार्य
राज. उच्च मा. विद्यालय, बूढ़ादीत, कोटा

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

कक्षा – 12

संयोजक :–

डॉ. अनूप आत्रेय
सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

सदस्य :–

डॉ. अशोक सोनी
मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर

श्री सतीश कुमार गुप्ता, प्रधानाचार्य
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, बूढ़ादीत, कोटा

श्री बनवारी लाल शर्मा, प्रधानाचार्य
राजकीय वोकेशनल उच्च माध्यमिक विद्यालय, नयापुरा, कोटा

श्रीमती अनिता खींचड़, व्याख्याता
राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, मानसरोवर, जयपुर

श्री प्रकाश चन्द्र शर्मा, प्राध्यापक
राजकीय वरिष्ठ उपाध्याय संस्कृत विद्यालय, दौसा

श्री ओमप्रकाश कूकणा, व्याख्याता
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, नं.–9, श्रीगंगानगर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

दो शब्द

विद्यार्थी के लिए पाठ्यपुस्तक क्रमबद्ध अध्ययन, पुष्टीकरण, समीक्षा और आगामी अध्ययन का आधार होती है। विषय-वस्तु और शिक्षण-विधि की दृष्टि से विद्यालयी पाठ्यपुस्तक का स्तर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है। पाठ्यपुस्तकों को कभी जड़ या महिमामण्डित करने वाली नहीं बनने दी जानी चाहिए। पाठ्यपुस्तक आज भी शिक्षण-अधिगम-प्रक्रिया का एक अनिवार्य उपकरण बनी हुई है, जिसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते।

पिछले कुछ वर्षों में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के पाठ्यक्रम में राजस्थान की भाषागत एवं सांस्कृतिक स्थितियों के प्रतिनिधित्व का अभाव महसूस किया जा रहा था, इसे दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार द्वारा कक्षा-9 से 12 के विद्यार्थियों के लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा अपना पाठ्यक्रम लागू करने का निर्णय लिया गया है। इसी के अनुरूप बोर्ड द्वारा शिक्षण सत्र 2016-17 से कक्षा-9 व 11 तथा सत्र 2017-18 से कक्षा-10 व 12 की पाठ्यपुस्तकें बोर्ड के निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर ही तैयार कराई गई हैं। आशा है कि ये पुस्तकें विद्यार्थियों में मौलिक सोच, चिंतन एवं अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करेंगी।

प्रो. बी.एल. चौधरी
अध्यक्ष
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

कक्षा – XII

विषय– अर्थशास्त्र (व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र)

समयः ..... पूर्णांक 80

क्र.सं.	पाठ्य वस्तु	कालांश	अंकभार
1.	परिचय	11	5
2.	उपभोक्ता का व्यवहार 1. उपभोक्ता का सन्तुलन 2. मांग की अवधारणा 3. मांग की कीमत लोच	34	12
3.	उत्पादक का व्यवहार 1. पूर्ति की अवधारणा 2. उत्पादन फलन 3. उत्पादन की अवधारणा 4. लागत की अवधाराणा 5. आगम की अवधाराणा	34	12
4.	6. फर्म का सन्तुलन बाजार के स्वरूप एवं कीमत निर्धारण 1. पूर्ण प्रतियोगिता 2. बाजार के अन्य स्वरूप 3. बाजार सन्तुलन	31	11
5.	राष्ट्रीय आय की अवधाराणाएँ 1. राष्ट्रीय आय की अवधाराणाएँ 2. राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित समुच्चय 3. राष्ट्रीय आय का मापन	30	11
6.	मुद्रा एवं बैंकिंग 1. मुद्रा का अर्थ एवं कार्य 2. व्यापारिक बैंक का अर्थ एवं कार्य 3. केन्द्रीय बैंक के कार्य साख नियंत्रण	25	10
7.	आय व रोजगार का निर्धारण 1. उपभोग फलन, बचत फलन एवं निवेश फलन 2. आय – उत्पादन का निर्धारण 3. अधि मांग व न्यून मांग की अवधारणा	27	10
8.	बजट एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अवधाराणा 1. सरकारी बजट एवं अर्थव्यवस्था 2. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अवधाराणाएँ	25	7
9.	नकदविहीन लेनदेन	3	2

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

व्यष्टि अर्थशास्त्र (Micro Economics)

इकाई का नाम

(अ) परिचय (इकाई– I) अंक 5

1. परिचय–

व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र का अर्थ, वास्तविक अर्थशास्त्र एवं आदर्शात्मक अर्थशास्त्र का अर्थ, अर्थव्यवस्था की केन्द्रीय समस्यायें: क्या, कैसे और किसके लिए उत्पादन ? उत्पादन संभावना वक्र, अवसर लागत एवं सीमान्त अवसर लागत की अवधाराणा।

(ब) उपभोक्ता का व्यवहार (इकाई II) अंक 12

1. उपभोक्ता का सन्तुलन :– उपयोगिता विश्लेषण, उपयोगिता का अर्थ एवं प्रकार, सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम, सम–सीमान्त उपयोगिता नियम, सीमान्त उपयोगिता विश्लेषण में उपभोक्ता के सन्तुलन की शर्तें, तटस्थता वक्र विश्लेषण एवं उपभोक्ता का सन्तुलन।
2. मांग की अवधाराणा :– मांग, बाजार मांग, मांग अनुसुची, मांग वक्र, मांग के निर्धारक तत्व, मांग मात्रा में परिवर्तन एवं मांग में परिवर्तन, मांग का नियम (विस्तृत व्याख्या)
3. मांग की कीमत लोच :– मांग की कीमत लोच का अर्थ, श्रेणियाँ, मांग की कीमत लोच का मापन 1. प्रतिशत विधि 2. कुल व्यय विधि 3. ज्यामितीय विधि (रेखीय मांग वक्र के संदर्भ में), मांग की लोच के निर्धारक घटक

(स) उत्पादक का व्यवहार (इकाई III) अंक 12

1. पूर्ति की अवधारणा :– पूर्ति , बाजार पूर्ति, पूर्ति अनुसूची, पूर्ति वक्र, पूर्ति के निर्धारक तत्व , पूर्ति मात्रा में परिवर्तन एवं पूर्ति में परिवर्तन, पूर्ति का नियम (विस्तृत व्याख्या)
2. उत्पादन फलन :– उत्पादन का अर्थ, स्थिर एवं परिवर्तनशील साधन, उत्पादन फलन का अर्थ व प्रकार , अल्पकालीन उत्पादन फलन उत्पादन का अर्थ, उत्पादन की अवधाराणाएँ – कुल उत्पाद, सीमान्त उत्पाद एवं औसत उत्पाद, परिवर्तनशील अनुपातों का नियम व कारण , विवेक पूर्ण उत्पादन की अवस्था
3. लागत की अवधाराणाएँ :– लागत का अर्थ, प्रकार (स्पष्ट एवं अस्पष्ट लागते, निजी एवं सामाजिक लागत, मौद्रिक एवं वास्तविक लागत) अल्पकालीन लागत, वक्र :– कुल लागत, कुल स्थिर लागत, कुल परिवर्तनशील लागत, औसत स्थिर लागत, औसत परिवर्तनशील लागत, सीमान्त लागत का अर्थ एवं अल्पकालीन लागत वक्रों के अन्तर्सम्बन्ध।
4. आगम की अवधारणाएँ :– अर्थ, प्रकार:– कुल आगम, औसत आगम एवं सीमान्त आगम के अर्थ एवं सम्बन्ध, औसत आगम व कीमत में सम्बन्ध, विभिन्न बाजार स्थितियों में आगम वक्र।
5. उत्पादक का सन्तुलन :– अर्थ एवं शर्तें:– 1. कुल आगम व कुल लागत विधि 2. सीमान्त आगम व सीमान्त लागत विधि।

(द) बाजार के स्वरूप एवं कीमत निर्धारण :– (इकाई IV) अंक 11

1. पूर्ण प्रतियोगी बाजार :– बाजार का अर्थ, प्रकार, पूर्ण प्रतियोगिता का अर्थ एवं विशेषताएँ
2. बाजार के अन्य स्वरूप :– एकाधिकार, एकाधिरात्मक प्रतियोगिता (अपूर्ण प्रतियोगिता) एवं अल्पाधिकार का अर्थ एवं विशेषताएँ।
3. बाजार सन्तुलन :– साम्य कीमत , साम्य मात्रा, एवं बाजार सन्तुलन का निर्धारण, मांग व पूर्ति में परिवर्तन का बाजार सन्तुलन पर प्रभाव।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

समष्टि अर्थशास्त्र

(अ) राष्ट्रीय आय की अवधारणाएँ (इकाई I) 11 अंक

1. राष्ट्रीय आय की मूल अवधारणाएँ :– स्टॉक एवं प्रवाह की अवधारणा, आय के चक्रीय प्रवाह का अर्थ द्विक्षेत्रीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में उपभोग वस्तुएँ एवं पूँजीगत वस्तुएँ, अन्तिम वस्तुएँ एवं मध्यवर्ती वस्तुएँ, सकल एवं शुद्ध निवेश एवं मूल्यह्रास, घरेलू सीमा एवं सामान्य निवासियों की अवधारणा, विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय की अवधारणा, विशुद्ध परोक्ष कर की अवधारणा।

2. राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित समुच्चय :– सकल एवं विशुद्ध घरेलू उत्पाद, सकल एवं विशुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (बाजार मूल्य एवं साधन लागत पर), राष्ट्रीय प्रयोज्य आय, (सकल व विशुद्ध) निजी आय, वैयक्तिक आय एवं वैयक्तिक प्रयोज्य आय, प्रति व्यक्ति आय की अवधारणा

3. राष्ट्रीय आय का मापन :– मूल्य वर्धित विधि, आय विधि एवं व्यय विधि, राष्ट्रीय आय व आर्थिक कल्याण में सम्बन्ध

(ब) मुद्रा एवं बैंकिंग – (इकाई II) 10 अंक

1.मुद्रा : वस्तु विनिमय का अर्थ एवं कठिनाईयाँ, मुद्रा का अर्थ व कार्य

2.व्यापारिक बैंक – अर्थ, कार्य एवं साख निर्माण की प्रकिया

3.केन्द्रीय बैंक – अर्थ, कार्य, साख, नियन्त्रण की विधियाँ (भारतीय रिर्जव बैंक के संदर्भ में)

(स) आय व रोजगार का निर्धारण :– (इकाई III) 10 अंक

1. उपभोग फलन, बचत फलन एवं निवेश फलन की अवधारणा:–उपभोग फलन, उपभोग प्रवृति, बचत फलन, बचत प्रवृति व निवेश फलन की अवधारणाएँ

2. आय – उत्पादन का निर्धारण – समग्र मांग व समग्र पूर्ति की अवधारणाएँ, आय के सन्तुलन स्तर का निर्धारण, निवेश गुणक की अवधारणा

3. अधि मांग एवं न्यून मांग की अवधारणा– अर्थ, समग्र मांग व समग्र पूर्ति के संदर्भ में अधिमांग व न्यून मांग की व्याख्या, नियन्त्रण के उपाय (मौद्रिक एवं राजकोषीय उपाय)

(द) बजट एवं अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार की अवधारणाएँ –(इकाई IV) 7 अंक

1. सरकारी बजट एवं अर्थव्यवस्था :– बजट का अर्थ, उद्देश्य और घटक, राजस्व प्राप्तियाँ एवं पूँजीगत प्राप्तियाँ, राजस्व व्यय एव पूँजीगत व्यय, बजट घाटे की अवधारणाएँ– राजस्व घाटा, राजकोषीय घाटा एवं प्राथमिक घाटा,

2. अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार की अवधारणाएँ :– अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार का अर्थ , व्यापार सन्तुलन एवं भुगतान सन्तुलन की अवधारणा, विदेशी विनिमय दर का अर्थ एवं मांग व पूर्ति द्वारा विनिमय दर का निर्धारण, मुद्रा का अवमूल्यन व अधिमूल्यन,

(य) नकदविहीन लेनदेन (इकाई–V) 2 अंक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

विषय सूची

इकाई	क्र.सं.	पाठ्य वस्तु	पृष्ठ संख्या
		खण्ड–1 : व्यष्टि–अर्थशास्त्र	
इकाई	I	परिचय	
	1.	अर्थशास्त्र का परिचय	01–10
इकाई	II	उपभोक्ता का व्यवहार	
	2.	उपभोक्ता का संतुलन	11–21
	3.	मांग की अवधारणा	22–28
	4.	मांग की कीमत लोच	29–35
इकाई	III	उत्पादक का व्यवहार	
	5.	पूर्ति की अवधारणा	36–40
	6.	उत्पादन फलन	41–46
	7.	उत्पादन की अवधारणा	47–52
	8.	लागत की अवधारणा	53–57
	9.	आगम की अवधारणा	58–61
	10.	फर्म का संतुलन	62–65
इकाई	IV	बाजार का स्वरूप एवं कीमत निर्धारण	
	11.	पूर्ण प्रतियोगी बाजार	66–71
	12.	बाजार के अन्य स्वरूप	72–77
	13.	बाजार सन्तुलन	78–84
		खण्ड–2 : समष्टि –अर्थशास्त्र	
इकाई	V	राष्ट्रीय आय की अवधारणाएँ	
	14.	राष्ट्रीय आय की मूल अवधारणाएँ	85–90
	15.	राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित समुच्चय	91–96
	16.	राष्ट्रीय आय का मापन	97–101
इकाई	VI	मुद्रा एवं बैंकिंग	
	17.	मुद्राः अर्थ, कार्य एवं महत्व	102–106
	18.	व्यापारिक बैंकः अर्थ एवं कार्य	107–111
	19.	केन्द्रीय बैंकः कार्य एवं साख–नियन्त्रण	112–118
इकाई	VII	आय व रोजगार का निर्धारण	
	20.	उपभोग फलन, बचत फलन व निवेश फलन की अवधारणा	119–126
	21.	आय –उत्पादन का निर्धारण	127–132
	22.	अधि मांग एवं न्यून मांग अवधारणा	133–137
इकाई	VIII	बजट एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अवधारणा	
	23.	सरकारी बजट एवं अर्थव्यवस्था	138–143
	24.	अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अवधारणाएँ	144–148
इकाई	IX	नकदविहीन लेनदेन	
	25.	नकदविहीन लेनदेन	149–154
		शब्दावली (Glossary)	155–157

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय –14

राष्ट्रीय आय की मूल अवधारणाएँ
(Basic Concepts of National Income)

आज सभी देशों में पशुपालन, कृषि, उद्योग, व्यापार एवं अन्य वाणिज्यिक क्रियाएँ जैसे परिवहन, संचार, बैंकिंग (अधिकोषण), भण्डारण इत्यादि की जाती है। उपर्युक्त कई प्रकार की आर्थिक–क्रियाओं के द्वारा लोग अपनी आजीविका कमाते हैं। कुछ लोग शारीरिक श्रम द्वारा आय अर्जित करते हैं और कुछ लोग मानसिक श्रम द्वारा भी आय का अर्जन करते हैं। आय विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त होती है। जिन देशों के अधिकांश लोगो को कई स्रोतों से आय प्राप्त होती हैं उनकी आय उन देशों के लोगो से अधिक होती है जिनके पास आय के कम स्रोत हो। कम आय वाले देश निर्धन तथा अधिक आय वाले देश धनी कहलाते हैं। आज प्रत्येक देश धनी बनना चाहता है। बोलचाल की भाषा में एक देश की आय को राष्ट्रीय आय कहते हैं।

राष्ट्रीय आय की सहायता से एक देश की आर्थिक उपलब्धियों की जानकारी मिलती है। उस देश की सरकार की नीतियों एवम् कार्यक्रमों के प्रभावशाली होने की स्थिति का पता चलता है। राष्ट्रीय आय एक देश की अर्थव्यवस्था के प्रवाह (Flow) दर्शाता है।

स्टॉक एवं प्रवाह (Stock and Flow) :–

आर्थिक चरों के अध्ययन में समय तत्व के आधार पर उन्हें स्टॉक अथवा प्रवाह के वर्ग में रखा जाता है। जब किसी भी आर्थिक चर का अध्ययन एक निश्चित समय बिन्दु पर किया जाता है तो उसे स्टॉक कहा जाता है। इसके विपरित जब किसी चर का एक समयावधि में अध्ययन किया जाता है तो उसे प्रवाह कहा जाता है।

शेपीरो के अनुसार – ''एक स्टॉक समय के एक निर्दिष्ट बिन्दु में माप मात्रा है और प्रवाह एक मात्रा है जो कि केवल समय के एक निर्दिष्ट काल में मापी जा सकती है''

इस अवधारणा को निम्नलिखित उदाहरण द्वारा सरलता से समझा जा सकता है।

माना किसी वर्ष की 1 जुलाई को एक बांध में 20 फिट पानी का स्तर है, बरसात के कारण तीन महीनों में यह बढ़ कर 40 फिट हो जाता है। पूरे वर्ष भर में पीने, खेती व उद्योग–धंधों में पानी की खपत होने के कारण अगले वर्ष के 30 जून को पानी का स्तर 25 फिट रह जाता है। इस उदाहरण की तीन बातें महत्वपूर्ण हैं। 1. एक जुलाई को शुरू में पानी का स्तर 20 फिट है। 2. वर्ष में (3 माह में) पानी की आवक 20 फिट हुई व वर्ष में जावक 15 फिट हुई। 3. वर्ष के आखिरी दिन 30 जून को पानी का स्तर 25 फिट रह जाता है।

ऊपर बताई गई तीन बातों में–एक जुलाई व 30 जून को पानी का स्तर (भण्डार अर्थात स्टॉक) (Stock) क्रमशः 20 फिट व 25 फिट होता है। एक जुलाई व 30 जून समय के बिन्दु (Point of Time) हैं। इसी तरह एक जुलाई व 30 जून के दो समय के बिन्दुओं के बीच की समय की अवधि (Period Between Two Point of Time) में पानी की आवक (अन्दर की ओर प्रवाह) 20 फिट हुई व जावक (बाहर की ओर प्रवाह) 15 फिट हुई। इस प्रकार पानी की शुद्ध आवक (Net In-Flow) 5 फिट (20-15=5) हुई।

राष्ट्रीय आय भी इसी तरह एक प्रकार का प्रवाह (Flow) होता है। यह प्रवाह (Flow) एक वर्ष की अवधि (भारत में किसी वर्ष के एक अप्रेल से अगले वर्ष के 31 मार्च के दो समय बिन्दुओं के बीच की अवधि) से सम्बन्ध रखता है। इसी तरह समय के एक निर्दिष्ट बिन्दु पर सम्पत्तियों का स्तर स्टॉक (भण्डार या स्कन्ध) कहा जाता है। राष्ट्रीय आय का इस प्रकार का प्रवाह **(Flow)** उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं से उत्पन्न होता है। एक देश के लोग राष्ट्रीय आय का प्रवाह उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं से वहाँ के समस्त संसाधनों के द्वारा अर्जित करते हैं। राष्ट्रीय आय का प्रवाह उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं से देश के लोगों के बीच में चक्राकार रूप में उसी तरह घूमता रहता है जैसे शरीर में रक्त का संचार होता है।

आय का चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) :–

आय के चक्राकार प्रवाह के विचारों का पहली बार फ्रांस के प्रकृतिवादी–कृषि अर्थशास्त्री फ्रेंकायज क्वीजने (Francois Quesney) ने सन् 1758 के द्वारा किया गया। कार्ल मार्क्स (Karl Marx) ने फ्रेंकायज क्वीजने की आर्थिक– तालिका को दुबारा

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रकाशित किया।

एक देश की अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र होते हैं जैसे परिवार (उपभोक्ता), व्यवसाय (उत्पादक) व सरकारें इत्यादि। सभी क्षेत्र एक दूसरे पर निर्भर होते हैं। विभिन्न घटकों जैसे परिवार (उपभोक्ता) व व्यवसाय (उत्पादक) इत्यादि की एक दूसरे पर निर्भरता को आय के चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) की सहायता से समझ सकते हैं। उत्पादन के साधनों की उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं के द्वारा वस्तुओं व सेवाओं का उत्पादन होता है। 'आयलर प्रमेय' (Euler's Theorem) के अनुसार समस्त उत्पादन का पूरा–पूरा बंटवारा उत्पादन के साधनों को हो जाता है। इस प्रकार साधनों को उत्पादन का वितरण होने पर उन्हें साधन–आय प्राप्त होती हैं। देश के लोगों द्वारा साधन–आय को व्यय करके वस्तुओं व सेवाओं को प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार एक देश के परिवारों व व्यावसायिक–फर्मों के मध्य उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं के द्वारा कमाई गई आमदनी घूमती रहती जिसे ही आय का चक्राकार प्रवाह कहते हैं। आय के चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) को दो क्षेत्रों के मॉडल की सहायता से निम्नानुसार समझ सकते हैं।

मॉडल–

एक 'मॉडल' जटिल वास्तविकता का सरल रूप होता है। जैसे मानव शरीर व उसकी कार्य प्रणाली को मिट्टी या प्लास्टिक के मॉडल द्वारा आसानी से समझ सकते हैं। इसी तरह एक देश की अर्थव्यवस्था के परिवारों व व्यावसायिक–फर्मों के मध्य आमदनी के चक्राकार प्रवाह को भी एक 'मॉडल' की सहायता से समझ सकते हैं। आय का चक्राकार प्रवाह का मॉडल निम्न बातों को आवश्यक मानता है:–

1. एक देश में सम्पूर्ण उत्पादन केवल व्यावसायिक–फर्में ही करती है।
2. व्यावसायिक–फर्में अपना सम्पूर्ण उत्पादन बेच देती है, बिना बेचा उत्पादन, कच्चा माल शेष नहीं बचता है।
3. एक देश में सरकार तो होती है किन्तु वह कर इत्यादि नहीं लेती तथा लोगों को सहायता, अनुदान नहीं देती है।
4. एक देश की अर्थव्यवस्था बन्द है अर्थात विदेशों से आयात व निर्यात नहीं होता है।

यद्यपि जब एक देश की अर्थव्यवस्था खुली होती है तब आय के चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) के क्षेत्रों की संख्या पाँच– (परिवार, व्यावसायिक–फर्में, पूँजी–बाजार, सरकार व शेष–विश्व) होती हैं। एक सरल आय के चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) के मॉडल में निम्न दो क्षेत्र होते हैं– 1. प्रथम क्षेत्र–परिवार क्षेत्र (Household Sector)

2. द्वितीय क्षेत्र–व्यावसाय क्षेत्र (Business Sector)

1. परिवार क्षेत्र :– परिवार क्षेत्र से आशय वह क्षेत्र जो उत्पादन के साधनों (श्रम, भूमि, पूँजी इत्यादि) का स्वामीं हैं। परिवार में केवल व्यावसायिक–फर्मों के द्वारा किये गये उत्पादन का उपभोग होता है।

2. व्यावसायिक क्षेत्र:– व्यावसायिक क्षेत्र का अर्थ वह क्षेत्र जो परिवार से उत्पादन के साधनों (श्रम, भूमि, पूँजी इत्यादि) की सहायता से उत्पादन करता है। उपभोग हेतु उत्पादन को परिवार को बेच देता है। इस स्थिति को रेखाचित्र 14.1 की सहायता से समझ सकते हैं।

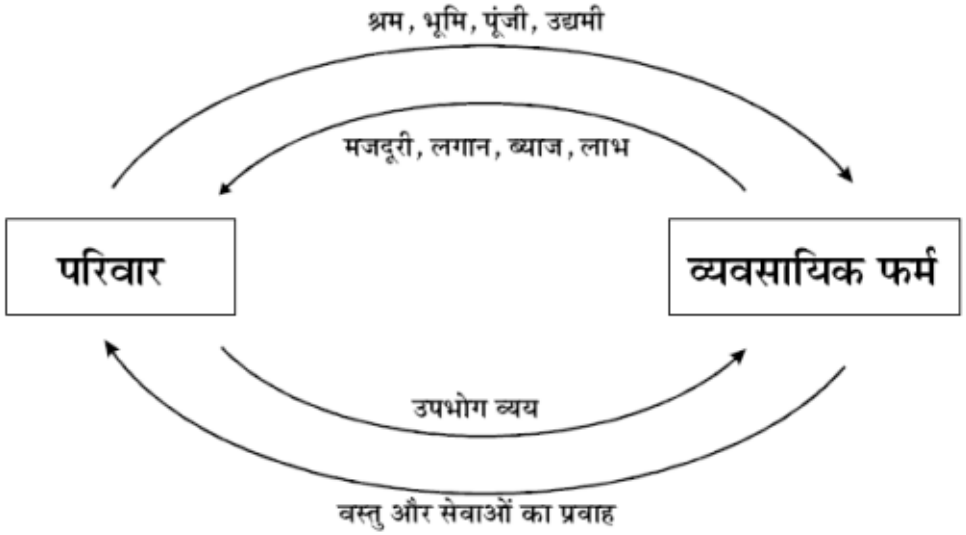

रेखाचित्र 14.1 : आय का चक्राकार प्रवाह

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इस प्रकार एक देश में उत्पादन के साधन परिवार से व्यावसायिक–फर्मों की ओर/तरफ जाते हैं। व्यावसायिक–फर्मों के द्वारा साधनों के बदले में मुद्रा का भुगतान प्रतिफलों के रुप में किया जाता है। परिवार व्यावसायिक–फर्मों से जो मुद्रा का भुगतान आय के रुप में किया जाता है उसे दुबारा व्यावसायिक–फर्मों को भुगतान वस्तु और सेवाओं के लिए कर देते हैं। परिवार मुद्रा देकर बदले में व्यावसायिक–फर्मों से उपभोग हेतु वस्तुओं व सेवाओं को प्राप्त कर उनका उपभोग करता है। इस प्रकार परिवार का व्यय व्यावसायिक–फर्मों की आय व व्यावसायिक–फर्मों का व्यय परिवार की आय का निर्माण करते हैं। यह प्रवाह दो प्रकार का होता है– 1. वास्तविक प्रवाह– उत्पादन के साधनों का परिवार से व्यावसायिक–फर्मों की ओर तथा व्यावसायिक–फर्मों से उपभोग हेतु वस्तुओं व सेवाओं का परिवार की ओर प्रवाह। 2. मौद्रिक प्रवाह– व्यावसायिक–फर्मों से साधन–भुगतान का परिवार की ओर तथा परिवार से उपभोग–व्यय के रूप में व्यावसायिक–फर्मों की ओर प्रवाह। एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र को लेनदेन के प्रवाह का यह क्रम एक देश की अर्थव्यवस्था में लगातार चलता रहता है। उपर्युक्त का निष्कर्ष निम्न है:–

1. वस्तुओं व सेवाओं के लेनदेन (क्रय–विक्रय) की राशियाँ बराबर होती है। अर्थात् एक देश के समस्त उत्पादकों को मिलने वाली राशि उतनी ही होती है जितनी देश के समस्त उपभोक्ताओं द्वारा खर्च की जाती है।

2. आय के चक्राकार प्रवाह के चित्र को देखने से यह स्पष्ट होता है कि एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र को (प्रवाह) विपरीत दिशा में होता है। वस्तुओं व सेवाओं का बहाव (प्रवाह) जिस दिशा में होता है उसकी विपरीत दिशा में मुद्रा का बहाव (प्रवाह) होता है।

3. उत्पादन के साधनों का बहाव (प्रवाह) जिस दिशा में होता है उसकी विपरीत दिशा में उत्पादन के साधनों के प्रतिफल के लिए प्राप्त मुद्रा का बहाव (प्रवाह) होता है।

आय के चक्राकार प्रवाह में वस्तुएँ/सेवाएँ उनके प्रयोग की अवधि के आधार पर वर्गीकृत की जाती हैं जो निम्न हैं:–

1. उपभोग एवं पूँजीगत वस्तुएँ

उपभोग वस्तुएँ :– वे सभी वस्तुएँ जिनका पूरा का पूरा उपभोग उनको खरीदने के बाद ही हो जाता है। उपभोग वस्तुओं के उपभोग द्वारा समाज में लोग अपनी आवश्यकताएँ संतुष्ट करते हैं। उपभोग–वस्तुएँ अन्य वस्तुओं के उत्पादन में काम में नहीं ली जाती है। सामान्यतः व्यावसायिक फर्मे सुपुर्दगी के लिए तैयार वस्तुओं व सेवाओं का भण्डारण करके रखते हैं। उपभोग–वस्तुएँ ही अन्तिम–वस्तुएँ होने के कारण राष्ट्रीय आय की गणना के लिए इनके मूल्यों का समावेश किया जाता है। उपभोग वस्तुओं व सेवाओं के उदाहरण निम्न हैं– जैसे खाने–पीने की चीजें, कपड़े, वाहन, रेड़ियो, टेलिविजन व आपकी कक्षा की पुस्तकें इत्यादि। उपभोग वस्तुओं में सेवाएँ, गैर–टिकाउ व टिकाउ वस्तुएँ सम्मिलित होती हैं। कई बार टिकाउ उपभोग–वस्तुएँ व्यावसायिक उपयोग में लेने की स्थिति में पूँजीगत वस्तुएँ कहलाती हैं।

पूँजीगत वस्तुएँ :– उत्पादन में सहायता करने वाले वे साधन (वस्तुएँ) जो टिकाउ होते हैं, पूँजीगत वस्तुएँ कहलाती हैं। पूँजीगत वस्तुओं द्वारा कई वर्ष तक उत्पादन किया जा सकता हैं। मशीन, औजार, उपकरण, भवन, बाँध, नहर, बिजली बनाने का संयन्त्र व बिजली की लाइनें इत्यादि पूँजीगत वस्तुओं पर एक देश का विकास निर्भर करता है।

2. अन्तिम एवं मध्यवर्ती वस्तुएँ

अन्तिम वस्तुएँ :– वे सभी वस्तुएँ/सेवाएँ जिनका उपभोग या उत्पादन में उपयोग किया जा सकता है। जैसे तैयार भोजन का एक उपभोक्ता उपभोग करता है। इसी प्रकार एक उत्पादक द्वारा एक पम्पसेट या ट्रेक्टर का केवल उपयोग ही किया जाता है। अर्थात कच्चे माल या मध्यवर्ती वस्तुओं के रूप में प्रयोग नहीं किया जाता है। इस प्रकार की वस्तुओं व सेवाओं को अन्तिम वस्तुएँ कहते हैं।

मध्यवर्ती वस्तुएँ :– मध्यवर्ती वस्तुएँ सामान्यतः अर्द्ध–निर्मित वस्तुएँ अथवा कच्चे माल के रूप में होती हैं। इनमें सभी प्रकार की अर्द्ध–निर्मित वस्तुएँ सम्मिलित की जा सकती है। मध्यवर्ती वस्तुओं को उत्पादन–प्रक्रिया के एक या अधिक चरणों/सोपानों से होकर निकलने के बाद अन्तिम वस्तु में बदला जाता है। पहनने हेतु तैयार कपड़ों के लिए रूई, धागा इत्यादि मध्यवर्ती वस्तुएँ या अर्द्ध–निर्मित वस्तुएँ होती हैं।

सकल निवेश एवं शुद्ध निवेश :–

इसी प्रकार आय के चक्राकार प्रवाह व राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित कतिपय महत्वपूर्ण अवधारणाएँ निम्न हैं:– निवेश उत्पादन के लिए किया जाने वाला व्यय होता है। जब एक उत्पादक नकद धन व्यय करता है तब वह मौद्रिक निवेश कहलाता है। मौद्रिक निवेश द्वारा नयी मशीन, नया भवन, नया बाँध, नयी नहर इत्यादि बनाने पर वह वास्तविक निवेश में बदल जाता है। वास्तविक निवेश से ही उत्पादन व उत्पादन–क्षमता में सुधार होता है। निवेश दो प्रकार का होता है जैसे:– सकल निवेश व शुद्ध निवेश।

एक निश्चित अवधि (सामान्यतः एक वर्ष) में उत्पादक–पूँजीगत वस्तुओं पर जो व्यय करता है उसे सकल निवेश कहते हैं। सकल निवेश के उदाहरण हैं– नयी मशीन, नया भवन, नया बाँध, नयी नहर, नया बिजली बनाने का संयन्त्र व बिजली की लाइनें

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इत्यादि की कुल मात्रा में होने वाली वृद्धि। पहले से काम में ली जा रही पुरानी मशीन, पुराना भवन, पुराना बाँध, पुरानी नहर पर मरम्मत व्यय इत्यादि भी सकल निवेश में सम्मिलित होते हैं।

सकल निवेश = शुद्ध निवेश + मूल्यह्रास

शुद्ध निवेश :– एक निश्चित अवधि (सामान्यतः एक वर्ष) में होने वाले सकल निवेश में से भौतिक पूँजीगत वस्तुओं की घिसावट की राशि को घटाया जाता है। भौतिक पूँजीगत वस्तुओं की घिसावट अर्थात् मूल्यह्रास को घटाकर शेष बचा हुआ निवेश ही शुद्ध निवेश कहलाता हैं। शुद्ध निवेश में जब वृद्धि होती है तब वास्तविक रूप में उत्पादन व उत्पादन–क्षमता में सुधार होता है।

शुद्ध निवेश = सकल निवेश – मूल्यह्रास

मूल्यह्रास :– पूँजीगत वस्तुओं में घिसावट को मूल्यह्रास कहा जाता है। घिसावट के कारण मशीन, भवन, बाँध, नहर, बिजली बनाने के संयन्त्रों की क्षमता गिर जाती है। पूँजीगत वस्तुओं की कुल क्षमता/मात्रा में होने वाली कमीं उत्पादन में उपयोग करने के कारण होती है। इस प्रकार पूँजीगत वस्तुओं की टूट–फूट/घिसावट से हानि होती है। अतः मूल्यह्रास एक प्रकार की हानि होती है। मूल्यह्रास की गणना सकल निवेश में से शुद्ध निवेश घटा कर करते हैं।

मूल्यह्रास = सकल निवेश – शुद्ध निवेश

घरेलू–सीमा व सामान्य निवासियों की अवधारणा

घरेलू–सीमा की अवधारणाः– राष्ट्रीय आय की गणना में घरेलू–सीमा की अवधारणा महत्वपूर्ण मानी जाती है। घरेलू–सीमा की अवधारणा का अर्थ एक देश की भौगोलिक–सीमा के भीतर की जाने वाली आर्थिक–क्रियाओं से होता है। अर्थात घरेलू–सीमा की अवधारणा के अर्न्तगत एक देश की भौगोलिक–सीमा के बाहर की आर्थिक–क्रियाएँ सम्मिलित नहीं की जाती हैं।

सामान्य निवासियों की अवधारणाः– सामान्य निवासियों का आशय वे लोग जिन्हें किसी देश की नागरिकता मिली हुई है। राष्ट्रीय आय की गणना में एक देश के सामान्य निवासियों की क्रियाओं से अर्जित आय ही सम्मिलित की जाती है। चूँकि एक देश में सामान्य निवासियों व अनिवासियों की आर्थिक क्रियाओं में भेद किया जाता है। इस प्रकार सामान्य निवासियों की अवधारणा का राष्ट्रीय आय की गणना हेतु बहुत महत्व होता है।

विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय की अवधारणाः–

एक देश के आयात व निर्यात का राष्ट्रीय आय की गणना में बहुत महत्व होता है। आयात व निर्यात के द्वारा राष्ट्रीय आय की मात्रा व दिशा का पता चलता है। निर्यात की तुलना में आयात अधिक होने पर विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय ऋणात्मक होती है। आयात पर निर्यात की अधिकता होने पर विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय होती है। अर्थात् विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय आयात व निर्यातों को घटाकर उनके अन्तर द्वारा ज्ञात की जाती हैं।

इस प्रकार विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय = निर्यात – आयात । वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय (NFIA) को घरेलु साधनों द्वारा विदेशों में अर्जित आय में से विदेशी साधनों द्वारा देश में अर्जित आय के अन्तर से ज्ञात किया जाता है।

विशुद्ध परोक्ष करों की अवधारणा :–

एक देश में होने वाले उत्पादन का मूल्यांकन बाजार कीमत (MP) पर किया जाता है। उत्पादन के बाजार कीमत पर मूल्यांकन हेतु साधन–लागत (FC) व अप्रत्यक्ष कर, (Indirect Tax) को जोड़ा जाता है। अप्रत्यक्ष कर, (Indirect Tax) जैसे वस्तु व सेवा कर (GST), को साधन–लागत (FC) में जोड़ा तथा उसमें से सरकार द्वारा दिये गये अनुदान (Subsidy) को घटाया जाता है। इस प्रकार विशुद्ध परोक्ष कर को सकल अप्रत्यक्ष कर, (Indirect Tax) में से अनुदान (Subsidy) घटाकर ज्ञात किया जाता है।

शुद्ध अप्रत्यक्ष कर **(Net Indirect Tax)** = सकल अप्रत्यक्ष कर **(Gross Indirect Tax)** – अनुदान **(Subsidy)**

वास्तविक जगत में दो क्षेत्रों के बजाय चार क्षेत्रों में राष्ट्रीय आय का चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) होता है। राष्ट्रीय आय के स्तर, रोजगार के स्तर, देश में बचत का स्तर, देश में विनियोग का स्तर, सामान्य कीमत–का स्तर, आर्थिक–वृद्धि व विकास में उतार व चढ़ाव इत्यादि का अध्ययन व्यापक अथवा समग्र स्तरों के रूप में समष्टिगत–अर्थशास्त्र में किया जाता है। राष्ट्रीय आय विभिन्न प्रकार की उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं से उत्पन्न होती है। जैसे– पशुपालन, कृषि, उद्योग, व्यापार एवं अन्य वाणिज्यिक क्रियाएँ।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- राष्ट्रीय आय समय के दो बिन्दुओं के बीच की अवधि में एक देश की अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित प्रवाह (Flow) होता है। इसी तरह समय के दो बिन्दुओं के दिन देश की सम्पत्तियों का स्तर (भण्डार या स्कन्ध अर्थात स्टॉक) **(Stock)** कहा जाता है।
- आय के चक्राकार प्रवाह के विचारों का पहली बार फ्रांस के प्रकृतिवादी–कृषि अर्थशास्त्री फ्रेंकायज क्वीजने (Francois Quesney) ने सन् 1758 के द्वारा किया गया।
- एक सरल आय के चक्राकार प्रवाह के मॉडल में निम्न दो क्षेत्र होते हैं–1. प्रथम क्षेत्र–परिवार व 2. द्वितीय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

क्षेत्र–व्यावसायिक–फर्में।

- एक देश में उत्पादन के साधन परिवार से व्यावसायिक–फर्मों की ओर/तरफ व साधन–प्रतिफल व्यावसायिक–फर्मों से परिवार ओर/तरफ जाते हैं। इस प्रकार परिवार का व्यय व्यावसायिक–फर्मों की आय व व्यावसायिक–फर्मों का व्यय परिवार की आय का निर्माण करते हैं।
- वे सभी वस्तुएँ/सेवाएँ जिनका पूरा का पूरा (प्रयोग) उपभोग उनको खरीदने के बाद ही हो जाता है। अर्थात उपभोग वस्तुओं व सेवाओं का उपभोग केवल एक वित्तीय वर्ष में ही किया जा सकता है।
- उत्पादन में सहायता करने वाले वे साधन (वस्तुएँ) जो टिकाउ होते हैं, पूँजीगत वस्तुएँ कहलाते हैं। पूँजीगत वस्तुओं द्वारा कई वर्ष तक उत्पादन किया जा सकता हैं।
- मध्यवर्ती वस्तुएँ सामान्यतः अर्द्ध–निर्मित वस्तुएँ अथवा कच्चे माल के रूप में होती हैं। मध्यवर्ती वस्तुओं को उत्पादन–प्रक्रिया के एक या अधिक चरणों/सोपानों से होकर निकलने के बाद अन्तिम वस्तु में बदला जाता है।
- निवेश उत्पादन के लिए किया जाने वाला व्यय होता है। जब एक उत्पादक नकद धन व्यय करता है तब वह मौद्रिक निवेश कहलाता है। मौद्रिक निवेश द्वारा नयी मशीन, नया भवन, नया बाँध, नयी नहर इत्यादि बनाने पर वह वास्तविक निवेश में बदल जाता है।
- निवेश दो प्रकार का होता है जैसेः– सकल निवेश व शुद्ध निवेश।
- एक निश्चित अवधि (सामान्यतः एक वर्ष) में उत्पादक–पूँजीगत वस्तुओं पर खर्च सकल निवेश तथा भौतिक पूँजीगत वस्तुओं की घिसावट अर्थात् मूल्यह्रास को घटाकर शेष बचा हुआ निवेश ही शुद्ध निवेश कहलाता हैं।
- पूँजीगत वस्तुओं में घिसावट को मूल्यह्रास कहा जाता है।घरेलू–सीमा की अवधारणा का अर्थ एक देश की भौगोलिक–सीमा के भीतर की जाने वाली आर्थिक–क्रियाएँ।
- राष्ट्रीय आय की गणना में एक देश के सामान्य निवासियों की क्रियाओं से अर्जित आय ही सम्मिलित की जाती है।
- विदेशों से प्राप्त विशुद्ध साधन आय आयात व निर्यातों को घटाकर उनके अन्तर द्वारा ज्ञात की जाती हैं।
- वास्तविक जगत में दो क्षेत्रों के बजाय चार क्षेत्रों में राष्ट्रीय आय का चक्राकार प्रवाह होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निम्न में से शुद्ध अप्रत्यक्ष कर ज्ञात किया जा सकता है –
   (अ) सकल अप्रत्यक्ष कर – अनुदान
   (ब) सकल अप्रत्यक्ष कर – ब्याज
   (स) सकल अप्रत्यक्ष कर – लाभ
   (द) सकल अप्रत्यक्ष कर + अनुदान
2. आय के चक्राकार प्रवाह के विचार का प्रतिपादन किसने किया ?
   (अ) फ्रेंकायज क्वीजने ने
   (ब)कार्ल मार्क्स ने
   (स) साइमन कुजनेट ने
   (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं
3. सकल निवेश में से क्या घटाने पर निवल निवेश प्राप्त होगा–
   (अ) शुद्ध ब्याज (ब) विनियोग
   (स) मूल्यह्रास (द) लाभ
4. उपभोग वस्तु का उदाहरण नहीं हैं –
   (अ) सब्जियाँ (ब) कपड़े
   (स) ब्रेड (द) सिंचाई के लिए पम्प–सेट
5. पूँजीगत वस्तुओं के उदाहरण नहीं हैं –
   (अ) मशीनें, भवन व ट्रेक्टर
   (ब) बाँध व नहरें
   (स) बिजली–संयन्त्र व बिजली की तन्त्र
   (द) खाने–पीने की चीजें व कपड़े

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. प्रवाह किसे कहते हैं ?
2. भण्डार या स्कन्ध किसे कहते हैं ?
3. राष्ट्रीय आय के चक्राकार प्रवाह क्या है ?
4. आय के चक्राकार प्रवाह के मॉडल के दो क्षेत्र कौन–कौन से होते हैं ?
5. मध्यवर्ती वस्तु से क्या अभिप्राय हैं ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. स्टॉक एवं प्रवाह में अन्तर कीजिए।
2. उपभोग वस्तुओं व पूँजीगत वस्तुओं में अन्तर का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
3. सकल और शुद्ध निवेश को समझाइये।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. मूल्यह्रास के आशय को संक्षेप में समझाइये।
5. सामान्य निवासियों की अवधारणा को समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. आय कें चक्राकार प्रवाह को उचित रेखाचित्र की सहायता से विस्तार पूर्वक समझाइये।
2. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।
   अ. उपभोग वस्तुऐं
   ब. पूंजीगत वस्तुऐं
   स. मध्यवर्ती वस्तुऐं
3. निम्नलिखित में भेद कीजिए।
   अ. स्टॉक एवं प्रवाह
   ब. सकल एवं शुद्ध निवेश
   स. अन्तिम एवं मध्यवर्ती वस्तुऐं

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
अ	अ	स	द	द

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय – 15

राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित सम्मुच्चय
(National Income And Its Related Aggregates)

अर्थशास्त्र में एक देश के आय स्तर (राष्ट्रीय आय) का अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। आर्थिक वृद्धि की गणना के लिए राष्ट्रीय आय का सबसे पहले प्रयोग प्रो. साइमन कुजनेट्स ने 1934 में किया। भारत में भी राष्ट्रीय आय का अध्ययन व आंकलन कई विद्वानों द्वारा किया गया है। स्वतंत्रता से पूर्व भारत में राष्ट्रीय आय के अनुमान दादा भाई नौरोजी(1868), विलियम डिग्बी(1899), फिण्डले सिराज (1911, 1922 व 1931), शाह व खम्भर(1921), डॉ. वी. के. आर. वी. राव(1925– 1929), व सी. आर. देसाई (1931–1940) के द्वारा लगाये गये थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय आय के अनुमान के लिए एक राष्ट्रीय आय समिति का गठन किया गया। राष्ट्रीय आय समिति का गठन प्रो. प्रफुल्ल चन्द्र महलनोबिस (1949) की अध्यक्षता में हुआ। उक्त समिति के सदस्य–सलाहकार प्रो. साइमन कुजनेट्स थे। 1956 से ही प्रतिवर्ष केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO) द्वारा भारत की राष्ट्रीय आय के अनुमान प्रकाशित किये जाते हैं।

राष्ट्रीय आय का अर्थ एवं परिभाषाएँ– राष्ट्रीय आय को समझने के लिए इसकी परिभाषाओं पर विचार करना आवश्यक है। राष्ट्रीय आय की प्रमुख परिभाषाओं में मार्शल, पीगू, फिशर व साइमन कुजनेट्स की परिभाषाएँ महत्वपूर्ण मानी जाती हैं।

मार्शल के अनुसार–''किसी एक देश का श्रम तथा पूँजी उसके प्राकृतिक साधनों पर क्रियाशील होकर प्रतिवर्ष भौतिक वस्तुओं व अभौतिक वस्तुओं का एक शुद्ध योगफल पैदा करता है जिसमें सभी प्रकार की सेवाएं सम्मिलित होती हैं। यही उस देश की वास्तविक शुद्ध वार्षिक आय या देश का राजस्व या राष्ट्रीय लाभाशं है।''

पीगू के अनुसार–''राष्ट्रीय आय समाज की वस्तुपरक आय का वह भाग है जो कि मुद्रा में मापा जा सकता है और इसमें विदेशों से प्राप्त आय भी सम्मिलित होती है।''

फिशर के अनुसार–''राष्ट्रीय लाभाशं अथवा आय में केवल अन्तिम उपभोक्ताओं द्वारा प्राप्त सेवाएं सम्मिलित होती हैं, चाहे वे भौतिक या मानवीय वातावरण से प्राप्त हों। इस प्रकार एक पियानो या ओवरकोट जो मेरे लिए इस वर्ष बनाया गया है, इस वर्ष की आय का भाग नहीं है वरन् पूँजी में वृद्धि है। केवल इन वस्तुओं द्वारा मेरे लिए इस वर्ष की गई सेवाएं ही आय है।''

साइमन कुजनेट्स द्वारा दी गयी निम्न परिभाषा को आधुनिक मानते हैं :– 'राष्ट्रीय आय वस्तुओं व सेवाओं का वह शुद्ध उत्पादन है जो एक वर्ष की अवधि में देश की उत्पादन–प्रणाली से अन्तिम उपभोक्ताओं के हाथों में पहुँचता है।' सरल शब्दों में 'एक वित्तीय–वर्ष की अवधि में देश के निवासियों द्वारा उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं की शुद्ध मात्रा के प्रचलित बाजार कीमत पर उस देश की मुद्रा में व्यक्त मूल्यों के योग को राष्ट्रीय आय का प्रवाह कहते हैं। यहाँ अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं का अभिप्राय उन वस्तुओं व सेवाओं से होता है जिनका उपभोग एक उपभोक्ता अथवा एक उत्पादक द्वारा किया जाता है।

मार्शल ने एक देश में एक वर्ष की समय–अवधि में राष्ट्रीय आय को भौतिक वस्तुओं व अभौतिक वस्तुओं (सेवाओं) के शुद्ध उत्पादन के योग के रूप में परिभाषित किया है। पीगू ने राष्ट्रीय आय को उत्पादन के मुद्रा में मापनीय मूल्य के योग के रूप में परिभाषित किया है। फिशर ने उत्पादन के स्थान पर उपभोग को राष्ट्रीय आय की गणना का आधार बनाया। फिशर ने राष्ट्रीय आय को एक वर्ष की समय–अवधि में भौतिक वस्तुओं व अभौतिक वस्तुओं (सेवाओं) के शुद्ध उत्पादन में से वह भाग जिसे सेवा के रूप में प्राप्त किया गया अर्थात जिस भाग का उपभोग हुआ उसी को राष्ट्रीय आय माना है।

राष्ट्रीय आय की विशेषताएँ– उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर राष्ट्रीय आय की निम्न विशेषताएँ हैं–

1. राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध एक देश की अर्थव्यवस्था से होता है।
2. राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध एक निश्चित अवधि, जो सामान्यतः एक वित्तीय–वर्ष की होती है, (भारत में एक अप्रेल से अगले वर्ष के 31 मार्च तक)।
3. राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध एक देश के निवासियों की आर्थिक–क्रियाओं से होता है किन्तु वर्तमान में देश के भौगोलिक क्षेत्र में निवासियों और गैर निवासियों की

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

आर्थिक–क्रियाओं का अध्ययन भी इसमें शामिल होता है।

4. राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध उत्पादक आर्थिक–क्रियाओं से होता है अर्थात इसमें अनुत्पादक–क्रियाओं को सम्मिलित नहीं किया जाता है।
5. राष्ट्रीय आय की गणना का सम्बन्ध अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादन से होता है अर्थात इसमें अन्तरिम (अर्ध निर्मित या मध्यवर्ती) वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादन को सम्मिलित नहीं किया जाता है।
6. राष्ट्रीय आय की गणना प्रचलित बाजार कीमत पर की जाती है।
7. राष्ट्रीय आय की गणना देश की मुद्रा में व्यक्त की जाती है।
8. राष्ट्रीय आय की गणना विभिन्न–वस्तुओं व सेवाओं के मूल्यों का योग होती है।
9. राष्ट्रीय आय एक प्रकार का प्रवाह होता है तथा यह एक प्रकार का भण्डार/स्कन्ध (Stock) नहीं होता है।
10. राष्ट्रीय आय की गणना शुद्ध मात्रा के अनुसार की जाती है अर्थात इसमें से घिसावट (मूल्यह्रास) को घटाया जाता है।

राष्ट्रीय आय की विभिन्न अवधारणाएँ

राष्ट्रीय आय की गणना दो आधारों पर की जाती है–

1. भौगोलिक आधार पर 2. राजनैतिक आधार पर

1. भौगोलिक आधार पर–

घरेलू आधार पर राष्ट्रीय आय की गणना करने हेतु एक देश की भौगोलिक–सीमा के आधार पर अध्ययन किया जाता है। एक देश की भौगोलिक–सीमा में निवासियों व विदेशी निवासियों, कम्पनियों के द्वारा होने वाले कुल उत्पादन के मूल्यों को जोड़ते हुए सकल घरेलू–उत्पाद (GDP) का स्तर ज्ञात किया जाता है।

2. राजनैतिक आधार पर–

राष्ट्रीय आय की गणना राजनैतिक आधार पर करने के लिए देश की नागरिकता पर विचार करते हैं। एक देश की नागरिकता जिनके पास होती है, उन लोगों के द्वारा भौगोलिक–सीमा में व दूसरे देशों की भौगोलिक–सीमा में अर्जित आय पर विचार होता है। इस प्रकार एक देश के निवासियों (नागरिकों) द्वारा भौगोलिक–सीमा में व दूसरे देशों की भौगोलिक–सीमा में किये गये उत्पादन के मूल्यों को जोड़ते हैं। एक देश के निवासियों (नागरिकों) ने कहीं भी उत्पादन किया हो, उसकी सहायता से सकल राष्ट्रीय–उत्पाद (GNP) का स्तर ज्ञात किया जाता है। उक्त विवरण निम्न चित्र से स्पष्ट हैं–

राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित कई अवधारणाएँ हैं जिनकी विवेचना निम्नानुसार है:–

1. बाजार कीमत पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP}):–

एक देश की भौगोलिक–सीमा के भीतर देश के निवासियों व विदेशी निवासियों, कम्पनियों के द्वारा उत्पादित अन्तिम वस्तुओं व सेवाओं के मूल्यों का योग और अर्द्धनिर्मित वस्तुओं व सेवाओं (Inventory) के भण्डार में वृद्धि सकल घरेलू उत्पाद (GDP_{MP}) कहलाता है।

$$GDP_{MP} = C+I+G+(X-M)$$

जहाँ:– C = उपभोग व्यय
I = विनियोग व्यय
G = सरकारी व्यय
X-M = शुद्ध निर्यात

(अ) बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{MP}) बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद ज्ञात करने के लिए बाजार कीमत पर सकल घरेलू–उत्पाद में से से घिसावट (मूल्यह्रास) को घटाया जाता है।

$$NDP_{MP} = GDP_{MP} - D$$

जहाँ:– D = घिसावट है।

(ख) साधन लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद (NDP_{FC}) साधन लागत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद ज्ञात करने के लिए बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू उत्पाद में से से अप्रत्यक्ष कर को घटाया जाता है और अनुदानों को जोड़ा जाता है।

$$NDP_{FC} = NDP_{MP} - IT+S$$

जहाँ:– IT = अप्रत्यक्ष कर
S = अनुदान

2. बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय–उत्पाद (GNP_{MP}):–

सकल राष्ट्रीय–उत्पाद एक देश की भौगोलिक–सीमा में में एक वर्ष की अवधि में देश के निवासियों व विदेशों में उसी देश के निवासियों, कम्पनियों के द्वारा उत्पादित अन्तिम वस्तुओं व

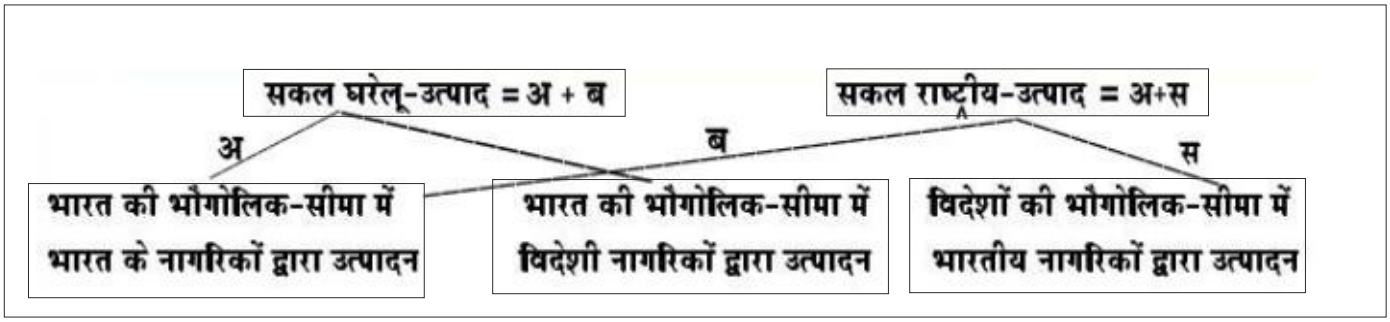

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सेवाओं के मूल्यों का मौद्रिक माप है। अर्द्धनिर्मित वस्तुओं व सेवाओं (Inventory) के भण्डार में वृद्धि सकल राष्ट्रीय–उत्पाद (GNP_{MP}) कहलाता है। वास्तविक उत्पादन को ज्ञात करना है तो सकल राष्ट्रीय–उत्पाद को कीमत परिवर्तनों के लिए समायोजित करना पड़ता है। सकल राष्ट्रीय–उत्पाद में निम्न तत्वों को शामिल किया जाता है।

$$\mathbf{GNP_{MP}} = GDP_{MP} + NFIA$$

जहाँः– NFIA = विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय,
X-M = शुद्ध निर्यात

या $\mathbf{GNP_{MP}} = C+I+G+NFIA+(X-M)$

1– एक वर्ष की अवधि में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं व सेवाओं के मूल्य जिन्हें घरेलु क्षेत्र द्वारा उपभोग किया जाता है जिसे C द्वारा दर्शाया जाता है।

2–एक वर्ष की अवधि में उत्पादित पूँजीगत वस्तुएं जिसमें निर्मित व अर्द्धनिर्मित वस्तुओं की माल सूचियां, स्थिर पूँजी निर्माण आदि शामिल होता है जिसे I द्वारा दर्शाया जाता है।

3–सरकार द्वारा वस्तुओं व सेवाओं पर किया गया व्यय अथवा चुकाया गया मूल्य जिसे G द्वारा दर्शाया जाता है।

4– अपने भौतिक या मानवीय साधनों द्वारा अन्य देशों में अर्जित आय और इसी प्रकार अन्य देशों के भौतिक या मानवीय साधनों द्वारा अपने देश में अर्जित आय का अंतर शुद्ध साधन आय कहलाती है। विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय को NFIA द्वारा दर्शाया जाता है।

5–इस प्रकार घरेलू निर्यातों के मूल्य में से विदेशी आयातों के मूल्य को घटाने पर शुद्ध निर्यात मूल्य प्राप्त होता है। जिसे X-M द्वारा दर्शाया जाता है।

3. बाजार कीमत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{MP}):–

वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादन में स्थिर पूँजी का उपयोग होता है उत्पादन प्रक्रिया के दौरान मशीनें घिस जाती हैं, अथवा उनमें टूट–फूट हो जाती है। कभी–कभी आविष्कार के कारण पुरानी मशीनें अनुपयोगी हो जाती हैं। इस प्रकार संसाधनों की उत्पादन–क्षमता में कमी या ह्रास होने के कारण सकल राष्ट्रीय–उत्पाद (GNP_{MP}) में से इस मूल्य को घटा दिया जाता है। बाजार कीमत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद गणना के द्वारा एक देश की अर्थव्यवस्था का सही–सही आंकलन किया जा सकता है। इस प्रकार घिसावट (मूल्यह्रास) को घटाकर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{MP}) की गणना निम्न प्रकार करते हैं–

$$\mathbf{NNP_{MP}} = GNP_{MP} - D$$

जहाँः– D = घिसावट है।

4. साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{FC}):–

एक देश में उत्पादित होने वाले वस्तु/सेवा के उत्पादन के लिए साधनों पर किया गया व्यय साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद होता है। जैसे– श्रम की लागत–मजदूरी, पूँजी के उपयोग की लागत–ब्याज, भूमि के उपयोग की लागत–लगान, उद्यमशीलता के उपयोग की लागत–लाभ इत्यादि के रूप कुल लागत कहलाती है। सरकार द्वारा लगाया गया अप्रत्यक्ष–कर (Indirect Tax) घटाते हैं व सरकार द्वारा दी गई छूट या अनुदान (Subsidy) जोड़ कर साधन–लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद की गणना की जाती है।

$$\mathbf{NNP_{FC}} = NNP_{MP} - IT + S$$

जहाँः– I T = अप्रत्यक्ष कर
ड = अनुदान

या $\mathbf{NNP_{FC}} = R+I+W+P$

जहाँः– R = लगाान
I = ब्याज
W = मजदूरी
P = लाभ

एक देश की राष्ट्रीय–आय का सर्वाधिक उपयुक्त माप उसकी साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{FC}) ही होता है।

5 निजी आय (Private Income) :–

निजी आय में सभी निजी क्षेत्र द्वारा उत्पादित आय अथवा अन्य किन्हीं स्त्रोतों से प्राप्त आय एवं निगमों द्वारा रखी गई आय शामिल होती है। साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद में जिन मदों को शामिल किया जाता है वे हैं सरकार व विदेशों से प्राप्त हस्तांतरण भुगतान (बेरोजगारी भत्ता, पेंशन), राष्ट्रीय ऋणों पर ब्याज, उपहार और अप्रत्याशित लाभ। जबकि जिन मदों को हम घटाते हैं वे हें सरकारी उद्यमों और सम्पत्ति से प्राप्त आय, गैर विभागीय बचतें और सामाजिक सुरक्षा अंशदान (भविष्य निधि, जीवन बीमा), इत्यादि। निजी आय निम्न प्रकार से ज्ञात की जाती है–

$$\mathbf{Private\ Income} = (NNP_{FC}) + TP + IPD - CSS - PPU$$

जहाँः– TP = सरकार व विदेशों से प्राप्त हस्तांतरण भुगतान
IPD = सार्वजनिक ऋणों पर ब्याज
CSS = सामाजिक सुरक्षा अंशदान
PPU = सार्वजनिक उपक्रमों के अतिरेक लाभ

6. व्यक्तिगत आय (PI):–

व्यक्तिगत आय उन सभी आय का योग होती है जो वास्तव में व्यक्तियों अथवा घरेलू क्षेत्र द्वारा प्राप्त होती है। व्यक्तिगत आय को निम्नानुसार ज्ञात किया जाता है–

व्यक्तिगत आय **(PI)** = NNP_{FC} - अवितरित निगम लाभ - निगम–कर-सामाजिक सुरक्षा अंशदान + हस्तांतरण भुगतान +

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सार्वजनिक ऋण पर ब्याज

(PI) = NNP_{FC} -UCP-CT-CSS+TP+IPD

जहाँ:– UCP= अवितरित निगम लाभ

CT= निगम कर

CSS = सामाजिक सुरक्षा अंशदान

TP = हस्तांतरण भुगतान

IPD = सार्वजनिक ऋण पर ब्याज

हस्तान्तरण भुगतान वे भुगतान हैं जो किसी सेवा की ऐवज में नहीं दिये जाते, अपितु सामाजिक सुरक्षा के तहत कमजोर वर्ग को सरकार की और से प्रदान किये जाते हैं। जैसे – पेंशन, बेरोजगारी भत्ता, विकलांगों को सहायता। इसमें क्रय शक्ति का हस्तान्तरण एक समुह से दूसरे समुह को होता है।

7. व्यक्तिगत खर्च योग्य आय (PDI):–

एक व्यक्ति की खर्च योग्य आय (PDI) व्यक्तिगत आय में से व्यक्तियों के आयकर व व्यक्तियों की फीस, जुर्माने घटाकर ज्ञात की जाती है–

व्यक्तिगत खर्च योग्य आय **(PDI)** = व्यक्तिगत आय (PI) - (व्यक्तियों के आयकरं) -(व्यक्तियों की फीस, जुर्माने)

प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय **(PCI)**:– किसी देश की राष्ट्रीय–आय के साथ–साथ उसकी प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय (PCI) का भी बहुत महत्व होता है। प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय (PCI) का मूल्यांकन राष्ट्रीय आय को किसी देश की जनसंख्या का भाग देकर निम्नानुसार ज्ञात किया जाता है–

प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय **(PCI)** = राष्ट्रीय आय (NI) में देश की जनसंख्या का भाग देने पर प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय प्राप्त होती है।

8 राष्ट्रीय खर्चयोग्य आय (National Dispsable Income) :–

एक देश की अर्थव्यवस्था के लोगों को विभिन्न वस्तुओं व सेवाओं की उपलब्धता का स्तर ज्ञात करते हुए जीवन–स्तर का आंकलन किया जा सकता है। सामान्यतः वस्तुओं व सेवाओं की उपलब्धता का स्तर राष्ट्रीय खर्चयोग्य–आय **(National Dispsable Income)** की गणना द्वारा किया जा सकता है। राष्ट्रीय खर्चयोग्य–आय की गणना करते समय शुद्ध अप्रत्यक्ष कर (Net Indirect Tax) व शेष विश्व से शुद्ध हस्तान्तरण आय (Net Transfer Earning from Rest of the World) को भी सम्मिलित करते हैं। शुद्ध अप्रत्यक्ष कर व शेष विश्व से शुद्ध हस्तान्तरण आय के द्वारा सरकारों की इच्छा अनुसार खर्च करने की क्षमता बढ़ती है इसलिए इनको राष्ट्रीय खर्चयोग्य–आय की गणना करते समय सम्मिलित करते हैं। एक व्यक्ति की खर्चयोग्य–आय (PDI) की भाँति राष्ट्रीय खर्चयोग्य–आय की संरचना के निम्न घटक होते हैं:– 1. सरकारी अन्तिम उपभोग–व्यय, 2. निजी अन्तिम उपभोग–व्यय व 3. बचतें।

NDI = NI + NIT + NTEW

जहाँ:– NIT = Net Indirect Tax, NI = National Income

NTEW=Net Transfer Earning from Rest of the World

भारत में राष्ट्रीय आय की गणना : संख्यात्मक उदाहरण:– एक देश की राष्ट्रीय–आय की निम्न सूचनाओं के आधार पर राष्ट्रीय–आय के निम्न विभिन्न घटकों – बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद (NDP_{MP}), साधन लागत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद (NDP_{FC}), बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय–उत्पाद (GNP_{MP}), बाजार कीमत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{MP}), साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{FC}), निजी आय (PI), व्यक्तिगत–आय (Per I), व्यक्तिगत खर्चयोग्य–आय (PDI व प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय–आय (PCI) की गणना कीजिए।

1. बाजार कीमत पर सकल घरेलू–उत्पाद (GDP_{MP}) = 4,00,000 करोड़ रू.
2. शुद्ध विदेशी–निर्यात से आय (X-M) = 10,000 करोड़ रू.
3. D घिसावट =10,000 करोड़ रू.
4. अप्रत्यक्ष–कर, I T= 10,000 करोड़ रू.
5. अनुदान S = 5,000 करोड़ रू.
6. देश की जनसंख्या= 100 करोड़
7. सरकारी विभागों जैसे रेल विभाग की आय = 10,000 करोड़ रू.
8. सरकारी गैर–विभाग जैसे स्टेट बैंक के लाभ = 10,000 करोड़ रू.
9. सरकारी कर्मचारियों द्वारा पेंशन इत्यादि हेतु चुकाया अंशदान= 5,000 करोड़ रू.
10. सरकार से व्यक्तियों को चालू वर्ष की प्राप्तियाँ = 5,000 करोड़ रू.
11. विदेशों से व्यक्तियों को चालू वर्ष की प्राप्तियाँ = 2,000 करोड़ रू.
12. सरकारी ऋणों पर ब्याज प्राप्तियाँ = 3,000 करोड़ रू.
13. निजी कम्पनी की बचतें = 10,000 करोड़ रू.
14. निजी कम्पनी के निगम–कर = 15,000 करोड़ रू.
15. व्यक्तियों के आयकर = 10,000 करोड़ रू.
16. व्यक्तियों की फीस = 4,000 करोड़ रू.
17. जुर्माने = 2,000 करोड़ रू.

संख्यात्मक उदाहरण का हल:–

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1. बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद (NDP_{MP}) = (GDP_{MP}) – D = 4,00,000–10,000=3,90,000 करोड़ रू.
2. साधन लागत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद (NDP_{FC}) = (NDP_{MP}) – IT + S = 3,90,000 – 10,000 + 5000 = 3,85,000 करोड़ रू.
3. बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय–उत्पाद (GNP_{MP}) = (GDP_{MP}) + शुद्ध विदेशी–आय
   = 4,00,000 + 10,000=4,10,000 करोड़ रू.
4. बाजार कीमत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{MP}) = (GNP_{MP}) - D = 4,10,000 – 10,000 = 4,00,000 करोड़ रू.
5. साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{FC}) = (NNP_{MP}) - IT+S = 4,00,000 – 10,000 + 5,000=3,95,000 करोड़ रू.
6. निजी आय (PI) = शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद (NNP_{FC}) - (सरकारी विभाग जैसे रेल विभाग की आय + सरकारी गैर–विभाग जैसे स्टेट बैंक के लाभ + सरकारी कर्मचारियों द्वारा पेंशन इत्यादि हेतु चुकाया अंशदान)+ (सरकार से चालू वर्ष की प्राप्तियाँ + विदेशों से चालू वर्ष की प्राप्तियाँ + सरकारी ऋणों पर ब्याज प्राप्तियाँ) = 3,95,000 - (10,000+10,000 +5,000)+ (5,000+2,000 +3,000) = 3,80,000 करोड़ रू.
7. व्यक्तिगत–आय (Per I) = निजी आय (PI) -(निजी कम्पनी की बचतें) - (निजी कम्पनी के निगम–कर)
   3,80,000–(10,000)–(15000) = 3,55,000 करोड़ रू.
8. व्यक्तिगत खर्चयोग्य–आय (PDI) = व्यक्तिगत–आय (Per I) - (व्यक्तियों के आयकरं) - (व्यक्तियों की फीस + जुर्माने) = 3,55,000–(10,000) – (4000) – (2000) = 3,39,000 करोड़ रू.
9. प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय–आय (PCI) = राष्ट्रीय–आय (NI) / देश की जनसंख्या
   = 3,95,000 करोड़ रू. / 100 करोड = 3,950 रू. प्रति व्यक्ति

राष्ट्रीय आय के माप की कठिनाइयाँ:–

राष्ट्रीय–आय का माप करते समय विभिन्न प्रकार की कठिनाइयाँ आती हैं। कुछ कठिनाइयाँ सैद्धान्तिक होती हैं। प्रमुख कठिनाइयाँ निम्न प्रकार हैं:–

1. स्वयं के रोजगार से प्राप्त आय की गणना कठिन कार्य है।
2. पुरानी, अन्तरिम व मध्यवर्ती वस्तुओं के मूल्यांकन की कठिनाइयाँ
3. अंशपत्र व ऋणपत्रों के बाजार के लेनदेन केवल कागजी क्रियाएँ होने से राष्ट्रीय–आय में नहीं गिनी जाती है।
4. गैर कानूनी क्रियाएँ व काला–बाजार की आर्थिक–क्रियाएँ भी सैद्धान्तिक कठिनाइयाँ पैदा करती हैं।
5. आराम के लिए अवकाश इत्यादि गणना कठिन कार्य है।

राष्ट्रीय आय का महत्व :–

राष्ट्रीय–आय का बहुत महत्व होता है। राष्ट्रीय–आय एक देश की अर्थव्यवस्था का दर्पण होता है। राष्ट्रीय–आय का मूल्यांकन एक देश की सही आर्थिक जानकारी प्रस्तुत करता है। सरकारों को राष्ट्रीय–आय की गणना के द्वारा उचित आर्थिक नीतियाँ बनाने में मदद मिलती है। देश में राष्ट्रीय–आय के आंकड़ो का उपयोग आय के समान वितरण, रोजगार में वृद्धि हेतु किया जाता है। एक देश के विभिन्न भागों (Regional) की आर्थिक प्रगति में असमानता का पता राष्ट्रीय–आय की वितरण से चल सकता है। क्षैत्रीय–असमानता दूर करने हेतु नीति बनाने में राष्ट्रीय–आय के आंकड़ो का बहुत उपयोग होता है। संसार के देशों की तुलना करने के लिए भी राष्ट्रीय–आय का अध्ययन सहायक होता है।

राष्ट्रीय–आय के आंकड़ो के आधार पर कृषि व पशुपालन के समुचित विकास की रण–नीतियाँ बनायी जाती है। प्रत्येक देश अपने उद्योग, व्यापार एवं अन्य वाणिज्यिक क्रियाओं के विस्तार का मूल्यांकन राष्ट्रीय–आय के आधार पर करता है। राष्ट्रीय–आय के आंकड़े शोध हेतु उपयोगी होते हैं। आर्थिक–नियोजन हेतु राष्ट्रीय–आय के स्तर व संरचना से उपयोगी जानकारियाँ मिलती है। राष्ट्रीय–आय की संरचना प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय–आय का आधार प्रदान करती है। प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय–आय सरकारों को आय के पुनः वितरण के लिए विभिन्न वित्तीय–सबलीकरण–कार्यक्रम (Financial-Empowerment Programme) अपनाने को प्रेरित करती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- आर्थिक वृद्धि की गणना के लिए राष्ट्रीय आय का सबसे पहले प्रयोग प्रो. साइमन कुजनेट्स ने 1934 में किया।
- स्वतंत्रता से पूर्व भारत में राष्ट्रीय आय के अनुमान दादा भाई नौरोजी(1868), विलियम डिग्बी(1899), फिण्डले सिराज(1911, 1922 व 1931), शाह व खम्भर(1921), डॉ. वी. के. आर. वी. राव(1925–1929), व सी. आर. देसाई(1931–1940) इत्यादि के द्वारा लगाये गये।
- आजकल केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO) द्वारा भारत की राष्ट्रीय आय के अनुमान सन् 1956 से ही प्रतिव र्ा प्रकाशित किये जाते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

- एक वित्तीय–वर्ष की अवधि (भारत में एक अप्रेल से अगले वर्ष के 31 मार्च तक) में देश के निवासियों द्वारा उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं की शुद्ध मात्रा के प्रचलित बाजार कीमत पर उस देश की मुद्रा में व्यक्त मूल्यों के योग को राष्ट्रीय आय का प्रवाह कहते हैं।
- घरेलू आधार पर राष्ट्रीय आय की गणना करने हेतु एक देश की भौगोलिक–सीमा के आधार पर विचार किया जाता है।
- एक देश की नागरिकता जिनके पास होती है, उन लोगों के द्वारा भौगोलिक–सीमा में व दूसरे देशों की भौगोलिक–सीमा में अर्जित आय पर विचार होता है।
- राष्ट्रीय–आय के आंकड़ो के आधार पर समुचित विकास की रण–नीतियाँ बनायी जाती है।
- प्रत्येक देश अपने उद्योग, व्यापार एवं अन्य वाणिज्यिक क्रियाओं के विस्तार का मूल्यांकन राष्ट्रीय–आय के आधार पर करता है। राष्ट्रीय–आय के आंकड़े शोध हेतु उपयोगी होते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राष्ट्रीय आय का विश्व में सबसे पहले प्रयोग किसने किया?
   (अ) विलियम डिग्बी ने
   (ब) साइमन कुजनेट्स ने
   (स) फिशर
   (द) डॉ. वी. के. आर. वी. राव
2. राष्ट्रीय आय को भौतिक व अभौतिक वस्तुओं (सेवाओं) के शुद्ध उत्पादन का योग किसने बताया ?
   (अ) मार्शल ने (ब) फिशर ने
   (स) साइमन कुजनेट्स ने (द) पीगू ने
3. निम्न में से कौन सा हस्तांतरण भुगतान नहीं है–
   (अ) पेंशन (ब) बेरोजगारी भत्ता
   (स) उपहार (द) वेतन
4. राष्ट्रीय आय की विशेषता नहीं हैं ?
   (अ) राष्ट्रीय आय एक वर्ष से सम्बन्धित होती है।
   (ब) राष्ट्रीय आय प्रवाह होती है।
   (स) इसकी गणना अन्तिम वस्तुओं व सेवाओं से होती है।
   (द) अनुत्पादक क्रियाएँ शामिल होती हैं।
5. राष्ट्रीय–आय का उपयुक्त माप है –
   (अ) GNP (ब) GDP
   (स) NNP_{FC} (द) NNP_{MP}

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. भारत की राष्ट्रीय आय के अनुमान प्रतिवर्ष किसके द्वारा प्रकाशित किये जाते हैं ?
2. भारत की राष्ट्रीय आय के अनुमान किस वर्ष से प्रकाशित किये जाते हैं ?
3. अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं का अभिप्राय संक्षेप में बताइये।
4. घरेलू आधार पर ज्ञात राष्ट्रीय आय की गणना को क्या कहा जाता है ?
5. देश की नागरिकता के आधार पर ज्ञात राष्ट्रीय आय की गणना को क्या कहा जाता है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. निम्न को संक्षेप में समझाइयेः–
   बाजार कीमत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद, साधन लागत पर शुद्ध घरेलू–उत्पाद, बाजार कीमत पर सकल राष्ट्रीय–उत्पाद, बाजार कीमत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद, साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय–उत्पाद, निजी आय, व्यक्तिगत–आय, व्यक्तिगत खर्चयोग्य–आय, प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय–आय।
2. राष्ट्रीय–आय के महत्व को संक्षेप में समझाइये।
3. राष्ट्रीय–आय के मापन की कठिनाईयों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय आय व इसकी विशेषताओं को विस्तार से समझाइये।
   काल्पनिक संख्यात्मक उदाहरण की सहायता से राष्ट्रीय आय के विभिन्न घटकों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
ब	अ	द	द	स

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय – 16

राष्ट्रीय आय का मापन
(Measurement of National Income)

राष्ट्रीय आय की गणना हेतु बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है। राष्ट्रीय आय की सही गणना के लिए पूर्ण सैद्धान्तिक जानकारी होनी चाहिए। राष्ट्रीय आय की गणना के आधार पर आर्थिक–विश्लेषण, भावी अनुमान तथा नीति–निर्माण व तदनुसार प्रभावी क्रियान्वन निर्भर करता है। राष्ट्रीय आय की गणना की विधियाँ भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। पूर्व के अध्ययन से स्पष्ट है कि एक देश में राष्ट्रीय आय का चक्राकार प्रवाह (Circular Flow of Income) होता है। राष्ट्रीय आय के चक्राकार प्रवाह के कारण एक पक्ष का व्यय जैसे–परिवार, दूसरे पक्ष जैसे व्यवसाय, की आय बन जाता है। इसके विपरीत होने पर भी कोई अन्तर नहीं हो सकता है। इसलिए राष्ट्रीय आय की गणना की विभिन्न विधियों की जानकारी करनी चाहिए।

राष्ट्रीय आय की गणना की विधियाँ– राष्ट्रीय आय की गणना मुख्यतः तीन विधियों से की जाती हैः–

1. उत्पादन विधि अथवा मूल्य–सम्वर्धन विधि
2. आय विधि
3. व्यय विधि।

राष्ट्रीय आय की गणना उत्पादन–विधि, आय–विधि या व्यय–विधि, किसी के भी द्वारा करने पर राष्ट्रीय आय के प्रवाह की मात्रा समान ही रहती है। यह समानता रहने का मूल कारण इस प्रकार हैः–

एक देश में जितना भी उत्पादन होता है उसे बेचकर जो प्राप्त धनराशि ∈ उत्पादन में सहयोगी (योगदानकर्ता), उत्पादन के साधनों (श्रम, पूँजी, भूमि, तकनीक–संगठन व साहस) के मालिकों में वितरित वह समस्त राशि होकर उन सबकी आय ∈ देश के लोगों के पास जितनी आय होती है, उस सीमा तक उनका खर्च (व्यय) बन जाता है।

अतः देश का कुल उत्पादन देश की कुल आय हो जाती है। एक देश के लोगों के पास जितनी आय होती है उस सीमा तक वे खर्च (व्यय) कर सकते हैं। अतः देश की कुल आय देश के कुल व्यय के रूप में बदल जाती है। इस प्रकार :–

कुल राष्ट्रीय उत्पादन ≡ कुल राष्ट्रीय आय ≡ कुल राष्ट्रीय व्यय

(Gross National Product) ≡ (Gross National Income) ≡ (Gross National Expenditure)

1. उत्पादन विधिः– अधिकांश देशों की राष्ट्रीय आय की गणना उत्पादन–विधि से करते हैं। यह राष्ट्रीय आय में गणना की सबसे सरल विधि होती है। किसी भी देश की राष्ट्रीय आय की गणना उत्पादन–विधि से करने के लिए कृषि, खनिजों व उद्योगों एवं विभिन्न सेवा क्षेत्रों से उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं को शामिल किया जाता है। यह ज्ञात रहे कि यहाँ अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं का उपभोग एक उपभोक्ता अपनी दैनिक आवश्यकताओं हेतु अथवा एक उत्पादक द्वारा उत्पादन (निवेश) के लिए किया जाता है।

राष्ट्रीय आय की गणना हेतु उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं की एक विस्तृत–सूची बनाई जाती है। उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं की सूची में प्रत्येक वस्तु या सेवा का नाम, उत्पादन–मात्रा, बाजार में प्रचलित कीमत का उल्लेख किया जाता है। अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं की मात्रा व कीमत को गुणा करते हुए उत्पादन का मूल्य ज्ञात करते हैं। अन्त में सभी उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं के मूल्यों को जोड़ते हैं। इस प्रकार सकल (कुल) राष्ट्रीय–उत्पाद (अर्थात् उत्पादन) की गणना की जाती है।

कुछ वस्तुओं व सेवाओं की प्रकृति अन्तरिम या मध्यवर्ती की होती है। अन्तरिम या मध्यवर्ती वस्तुओं व सेवाओं को उत्पादन–प्रक्रिया में काम लेते हैं। अन्तरिम या मध्यवर्ती वस्तुओं व सेवाओं को राष्ट्रीय आय की गणना हेतु सम्मिलित नहीं किया जाता है। अन्तरिम या मध्यवर्ती वस्तुओं व सेवाओं को सम्मिलित किया जाने पर राष्ट्रीय आय की दोहरी–गणना या भ्रामक–गणना हो जाती है।

उत्पादन–विधि से राष्ट्रीय आय की गणना करते समय कई बातों का ध्यान रखना चाहिए। राष्ट्रीय आय की दोहरी या अनेक बार होने वाली भ्रामक गणना से बचने के लिए केवल अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं के मूल्यों का ही योग करते हैं। राष्ट्रीय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

आय की दोहरी गणना से बचने के लिए उत्पादन – विधि की मूल्य–सम्वर्धन विधि का प्रयोग किया जाता है। मूल्य–सम्वर्धन विधि के द्वारा प्रत्येक चरण पर उत्पादन का सही–सही मूल्य ज्ञात किया जाता है। सकल राष्ट्रीय–उत्पाद का सही–सही मूल्य ज्ञात करने के लिए उत्पादन के मूल्यों में से उत्पादन के साधनों पर किये गये खर्च को घटाते हैं। अर्थात् पहले चरण पर उत्पाद के मूल्य को घटा देते है जिसे निम्न उदाहरण से समझ सकते हैं।

तालिका 16.1

क्र. सं.	उत्पादित वस्तु/ सेवा का नाम	मात्रा	बाजार कीमत	मूल्य (रु. में)
1.	अ	20	2	40
2.	ब	30	8	240
3.	स	10	6	60
4.	द	40	4	160
5.	य	10	2	20
—	——	—	—	——
—	——	—	—	——
कुल राष्ट्रीय–उत्पादन				520

दोहरी–गणना व मूल्य वृद्धि विधि का उदाहरणः–

माना एक बेकरी डबलरोटी का 1 किलोग्राम का पैकेट 60 रु. में बेचता है, इसे बनाने के लिए 1 किलोग्राम आटा 40 रु. में आटा–चक्की से खरीदता है, आटा–चक्की का मालिक 1 किलोग्राम गेंहू 30 रु. में किसान से खरीदता है। ऐसी स्थिति में बेकरी, आटा–चक्की व किसान के 1–1 किलोग्राम उत्पादन का भ्रामक मूल्य होगा–60+40+30=130 । किन्तु इसी स्थिति में देश में उत्पादन तो केवल 1 किलोग्राम ही हुआ। अतः उत्पादन का वास्तविक मूल्य = किसान के उत्पादन का मूल्य + आटा चक्की के उत्पादन का वास्तविक मूल्य + बेकरी के उत्पादन का सही–सही मूल्य = (बेकरी के उत्पादन का मूल्य – आटा चक्की के उत्पादन का मूल्य) + (आटा चक्की के उत्पादन का मूल्य – किसान के उत्पादन का मूल्य) + किसान के उत्पादन का मूल्य = 20+10+30 = 60 रु.। इस प्रकार केवल 1 किलोग्राम उत्पादन का सही मूल्य 130 रु के स्थान पर मात्र 60 रु हुआ। अतः राष्ट्रीय आय की गणना करते समय इस बात का ध्यान नही रखा जाता है तो राष्ट्रीय आय की गणना गलत मूल्य बतायेगी जो भ्रामक होगी।

मूल्यह्रासः–

उत्पादन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया होती है। उत्पादन करते समय उत्पादन के साधनों में टूट–फूट, घिसावट (मूल्यह्रास) या इसी प्रकार की अन्य हानियाँ होती हैं। पूँजी की (मशीनें इत्यादि) टूट–फूट व घिसावट होती है। नयी तकनीक की मशीनें इत्यादि बाजार में आ जाने के कारण पुरानी पूँजी (मशीनें इत्यादि) बेकार हो जाती हैं। उत्पादन के कारण भूमि की उपजाऊ क्षमता में कमी होती है। इस तरह उत्पादन–प्रक्रिया से कमायी गई शुद्ध राष्ट्रीय आय की गणना के लिए घिसावट (मूल्यह्रास) एक प्रकार की हानि होती है। इसीलिए घिसावट (मूल्यह्रास) को सकल राष्ट्रीय आय में से घटाया जाता है।

2. आय विधि–

आय विधि से राष्ट्रीय आय की गणना के द्वारा एक देश में आय के वितरण की जानकारी मिलती है। उत्पादन के साधनों (श्रम, भूमि, पूँजी इत्यादि) द्वारा उत्पादन किया जाता है। किसी वस्तु व सेवा में उपयोगिता का सृजन या उपयोगिता में वृद्धि करके उत्पादन किया जाता है। उत्पादन के साधनों को उत्पादन का पूर्णतः वितरण हो जाता है। यह वितरण – श्रम की कीमत– मजदूरी, पूँजी के उपयोग की कीमत– ब्याज, भूमि के उपयोग की कीमत– लगान, उद्यमशीलता के उपयोग की कीमत– लाभ इत्यादि के रूप में होता है। उत्पादन का पूर्णतः वितरण उत्पादन के साधनों में हो जाने के बाद शेष कुछ भी नहीं बचता है।

राष्ट्रीय आय की गणना के लिए उत्पादन के साधनों को वितरित आय के निम्न घटक होते हैंः–

(1.) मजदूरी — कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति
(2.) ब्याज
(3.) लगान/किराया–भाड़ा — परिचालन अतिरेक
(4.) लाभ
(5.) मिश्रित–आयः–वेतन या कमीशन के रूप में

इस प्रकार उत्पादन के पूर्णतः वितरण से प्राप्त प्रतिफल उत्पादन के साधनों (श्रम, भूमि, पूँजी इत्यादि) के मालिकों की साधन आय होती है। अतः आय विधि से राष्ट्रीय आय की गणना के लिए साधन आय को जोड़ते हैं। इस प्रकार सकल मजदूरी, सकल ब्याज, सकल लगान, सकल लाभ इत्यादि के रूप में प्राप्त प्रतिफलों का योग करते हुए सकल राष्ट्रीय आय ज्ञात की जाती है।

∴ सकल राष्ट्रीय आय = मजदूरी + ब्याज + लगान + लाभ + घिसावट ।

∴ NNI = W + I + R + ≈ + विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय है जिसे $NNP_{FC} = NDP_{FC} + NFIA$ के रूप में भी दिखाया जाता है।

जहाँः– W= मजदूरी, i = ब्याज, R = लगान ≈ = लाभ से आय हैं।

राष्ट्रीय आय की गणना की सावधानियां–

आय विधि से राष्ट्रीय आय की गणना के लिए कई बार

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सावधानी रखनी चाहिए जैसे– स्वयं के रोजगार से आय, नकद के स्थान पर वस्तु व सेवा के रूप में दी जाने वाली मजदूरी, स्वयं के मकान में रहना, उत्पादन का थोड़ा सा हिस्सा अपने लिए रख लेना व आय को सरकार को कम बताना या बताना ही नहीं। ऐसी स्थिति में सावधानी पूर्वक इन सभी मदों को आय विधि से राष्ट्रीय आय की गणना के लिए जोड़ा जायेगा।

3. व्यय विधि–

राष्ट्रीय आय की गणना के लिए जब व्यय विधि का उपयोग करते हैं तो सकल राष्ट्रीय व्यय की राशि ज्ञात करने के लिए एक वर्ष में होने वाले व्ययों (जीवन निर्वाह हेतु, पूँजीगत उपभोग हेतु, अधिक उत्पादन के लिए निजी पूँजीगत व्ययों, सरकार के व्ययों व शुद्ध विदेशी व्ययों) तथा घिसावट (मूल्यह्रास) का योग करते हैं।

राष्ट्रीय आय की गणना के लिए एक देश में होने वाले व्यय के प्रमुख निम्न घटक होते हैं:–

(1.) निजी–उपभोग
(2.) विनियोग / निवेश
(3.) सरकारी व्यय
(4.) शुद्ध निर्यात

(1.) निजी–उपभोग व्यय :– व्यक्तियों व परिवारों द्वारा होने वाले उपभोग–व्यय को निजी–उपभोग व्यय कहा जाता है। निजी–उपभोग व्यय के अर्न्तगत जिन वस्तुओं व सेवाओं पर किया जाता हैं वे निम्न प्रकार की होती है:–

(1.) अस्थायी उपभोक्ता वस्तुएँ
(2.) टिकाऊ–उपभोक्ता वस्तुएँ
(3.) उपभोक्ता–सेवाएँ

(2.) विनियोग / निवेश व्यय :–

निवेश एक प्रकार का उत्पादन के लिए किया जाने वाला व्यय होता है। एक निश्चित अवधि में होने वाले निवेश के कारण पूँजी के भण्डार (Stock) में वृद्धि होती है। उत्पादन–प्रक्रिया में अन्य साधनों के साथ–साथ पूँजी की घिसावट (Depreciation) होती है। यह घिसावट (Depreciation) एक प्रकार की हानि होती है। घिसावट (Depreciation) के लिए एक प्रकार प्रावधान (Provision) किया जाता है। यह प्रावधान 'पूँजी के उपभोग का प्रावधान' (Capital Consumption Allowance) कहलाता है। निवेश चार प्रकार के होते हैं:–

(1.) व्यावसायिक स्थिर–निवेश
(2.) माल के भण्डारों में निवेश
(3.) गृह–निर्माण में निवेश
(4.) सरकारी निवेश

(3.) सरकारी व्यय :–

सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ व सेवाएँ प्रदान की जाती है। एक देश की सरकार के व्यय को उत्पादन में योगदान के रूप में माना जाता है। सरकारी व्यय में शिक्षा, चिकित्सा, प्रतिरक्षा, कानून व व्यवस्था इत्यादि सम्मिलित होते हैं। सरकारी खरीद पर व्यय के अलावा भी सरकार अन्य व्यय करती है। राष्ट्रीय आय की गणना करने के लिए सरकार द्वारा कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति भुगतान, सरकारी–उपभोगव्यय व स्थायी पूँजी का उपभोग–व्यय को सम्मिलित करते हैं। सरकार लोगों को सामाजिक सुरक्षा के लिए धन का हस्तान्तरण करके व्यय करती है। ध्यान रहे कि विभिन्न प्रकार के हस्तान्तरण–व्यय बिना उत्पादक कार्यों के ही किये जाते हैं। अतः हस्तान्तरण–व्ययों को राष्ट्रीय आय की गणना करने के लिए नहीं जोड़ते हैं।

(4.) शुद्ध निर्यात व्यय :–

एक निश्चित अवधि में होने वाले आयात व निर्यात के अन्तर के आधार पर शुद्ध निर्यात व्यय ज्ञात किया जाता है। राष्ट्रीय आय की गणना हेतु शुद्ध निर्यात व्यय सम्मिलित करते हुए सकल राष्ट्रीय–व्यय की गणना निम्न प्रकार की जाती है:–

≺ सकल राष्ट्रीय व्यय = परिवारों का उपभोग व्यय + निजी निवेश व्यय + सरकारी व्यय + शुद्ध विदेशी व्यय

≺ $GDP_{MP} = C + I + G + (X - M)$

जहाँ:– C= उपभोग व्यय, I = निजी निवेश व्यय, G = सरकारी व्यय व (X-M) = आयात–निर्यात हैं।

राष्ट्रीय आय की गणना की समस्याएँ–

राष्ट्रीय आय की गणना करते समय कई कठिनाईयाँ आती है। केवल सैद्धान्तिक समस्याएँ ही नहीं आती है। कम विकसित देशों में लोग अनपढ़ होते हैं। कम विकसित देशों में ज्यादातर उत्पादन का वस्तु–विनिमय (Barter Exchange) होता हैं। बहुत सारे लेनदेन बाजार के बाहर होने के कारण सरकार को जानकारी ही नहीं होती है। पिछड़े देशों में श्रम–विभाजन व विशिष्टीकरण नहीं होता है। राष्ट्रीय–आय की सूचना आसानी से नहीं मिलती है। राष्ट्रीय–आय के आंकड़े भी कम विश्वसनीय होते हैं। इस प्रकार राष्ट्रीय आय की गणना करना कठिन होता है।

राष्ट्रीय–आय व आर्थिक कल्याण में सम्बन्ध :–

कल्याण से अभिप्राय व्यक्ति अथवा समाज की उस स्थिति से होता है जब दोनों प्रसन्न और संतुष्ट होते हैं। अर्थशास्त्रियों के अनुसार आर्थिक कल्याण से आशय उस कल्याण से होता है जिसे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मुद्रा द्वारा मापा जा सकता है।

राष्ट्रीय–आय व आर्थिक कल्याण में गहरा सम्बन्ध देखने को मिलता है। यह माना जाता है कि राष्ट्रीय आय के बढ़ने के साथ–साथ एक देश के लोगों का आर्थिक कल्याण भी बढता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

राष्ट्रीय आय का स्तर, राष्ट्रीय–उत्पादन में वृद्धि होने पर, बढ़ता है। राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि के कारण राष्ट्रीय व्यय भी बढ़ जाता है। राष्ट्रीय व्यय के बढ़ने पर आर्थिक कल्याण अधिक हो जाता है। एक देश के लोगों का आर्थिक कल्याण अधिक मात्रा में वस्तुओं व सेवाओं के उपभोग के कारण बढता है। इसी प्रकार राष्ट्रीय आय का देश के लोगों में बँटवारा समतापूर्ण किया जाना चाहिए।

1. सामान्यतः यह माना जाता है कि राष्ट्रीय आय का लोगों की सन्तुष्टि /प्रसन्नता से गहरा सम्बन्ध होता है। राष्ट्रीय आय का वितरण जितना समतापूर्ण होगा आर्थिक कल्याण उतना ही अधिक मात्रा में होगा। राष्ट्रीय–आय की विषमता के कारण कई प्रकार की आर्थिक अकुशलताएँ उत्पन्न होती हैं। आर्थिक अकुशलताएँ देश के विकास की गति को धीमा करती है। आय के वितरण के अतिरिक्त 2. आय को अर्जित करने का तरीका, 3. आय को व्यय करने का ढंग, 4. कार्यस्थल की दशाऐं आदि घटक भी आर्थिक कल्याण को प्रभावित करते हैं।

आजकल आर्थिक कल्याण को पर्यावरण की दशा के साथ जोड़ कर देखा जाने लगा है। एक नयीं शब्दावली 'हरित–लेखांकन' (Green Accounting) का प्रयोग किया जाता है। 'हरित–लेखांकन' में पर्यावरण की हानि का अध्ययन किया जाता है। पर्यावरण की हानि की मात्रा को राष्ट्रीय–आय से घटाकर 'पर्यावरण–संशोधित राष्ट्रीय–आय' (Environment Adjusted National Income) ज्ञात की जाती है। वर्तमान में 'पर्यावरण संशोधित राष्ट्रीय आय' (Environment Adjusted National Income) की अवधारणा को अपनाया जाने लगा है। इस प्रकार राष्ट्रीय आय का वितरण व पर्यावरण की दशा को अच्छा बनाये रखते हुए प्रत्येक देश आगे बढ़ना चाहता है। राष्ट्रीय आय का समतापूर्ण वितरण व पर्यावरण की उत्तम दशा होना आवश्यक है। समतापूर्ण वितरण व पर्यावरण की उत्तम दशा से एक देश में टिकाउ विकास (Sustainable development) किया जा सकता हैं।

टिकाउ विकास (Sustainable development) भविष्य की आवश्यकताओं को प्रभावित किये बिना वर्तमान की आवश्कताओं पूर्ति करने वाला विकास सतत विकास कहलाता है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- राष्ट्रीय आय की गणना मुख्यतः तीन विधियों से की जाती है:– उत्पादन विधि अथवा मूल्य–सम्वर्धन विधि, आय विधि व व्यय विधि।
- एक देश में कुल राष्ट्रीय–उत्पादन =कुल राष्ट्रीय आय= कुल राष्ट्रीय व्यय होते हैं।
- राष्ट्रीय आय की गणना उत्पादन–विधि से करते समय देश में उत्पादित अन्तिम उपभोग्य–वस्तुओं व सेवाओं को शामिल विचार करते हैं।
- राष्ट्रीय आय की दोहरी गणना से बचने के लिए मूल्य–सम्वर्धन विधि का प्रयोग किया जाता है।
- उत्पादन करते समय उत्पादन के साधनों में टूट–फूट, घिसावट (मूल्यह्रास), या इसी प्रकार की अन्य हानियाँ होती हैं। जिसे पूँजीगत–उपभोग भत्ता भी कहते हैं।
- आय विधि से राष्ट्रीय आय की गणना के लिए सकल मजदूरी, सकल ब्याज, सकल लगान, सकल लाभ इत्यादि के रूप में प्राप्त प्रतिफलों का योग करते हुए सकल राष्ट्रीय आय ज्ञात की जाती है।
- राष्ट्रीय आय की गणना व्यय विधि से करने के लिए एक वर्ष में होने वाले व्ययों (जीवन निर्वाह हेतु, पूँजीगत उपभोग हेतु, अधिक उत्पादन के लिए निजी पूँजीगत व्ययों, सरकार के व्ययों व शुद्ध विदेशी व्ययों) तथा घिसावट (मूल्यह्रास) का योग करते हैं।
- राष्ट्रीय आय की गणना करते समय सैद्धान्तिक व अन्य प्रकार की समस्याएँ लोगों के अनपढ़ होने, वस्तु–विनिमय, व बाजार के बाहर लेनदेन होने के कारण उत्पन्न होती हैं।
- राष्ट्रीय आय के बढ़ने के साथ–साथ एक देश के लोगों का आर्थिक कल्याण भी बढता है। राष्ट्रीय आय का वितरण जितना समतापूर्ण होगा आर्थिक कल्याण उतना ही अधिक मात्रा में होगा। राष्ट्रीय आय की विषमता के कारण कई प्रकार की आर्थिक अकुशलताएँ उत्पन्न होती हैं।
- आजकल आर्थिक कल्याण को पर्यावरण की दशा के साथ जोड़ नयीं शब्दावली 'हरित–लेखांकन' का प्रयोग किया जाता है। पर्यावरण की हानि की मात्रा को राष्ट्रीय आय से घटाकर 'पर्यावरण–संशोधित राष्ट्रीय आय' ज्ञात की जाती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राष्ट्रीय आय की गणना की विधियाँ हैं –
   (अ) उत्पादन विधि (ब) आय विधि
   (स) व्यय विधि (द) उपर्युक्त सभी
2. भारत में राष्ट्रीय आय की गणना के लिए कौन सी वस्तुओं को सम्मिलित करतें हैं ?
   (अ) मध्यवर्ती–वस्तुओं व सेवाओं को
   (ब) अर्द्धनिर्मित –वस्तुओं व सेवाओं को
   (स) अन्तिम उपभोग्य वस्तुओं व सेवाओं को
   (द) कच्चे माल को
3. राष्ट्रीय आय की किस विधि में दोहरी–गणना की त्रुटि की संभावना होती है –
   (अ) व्यय विधि (ब) उत्पादन विधि

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(स) आय विधि (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

4. राष्ट्रीय आय की आय विधि से गणना के घटक नहीं हैं ?
   (अ) मजदूरी व ब्याज
   (ब) लगान / किराया–भाड़ा
   (स) मिश्रित–आय व लाभ
   (द) अन्तिम उपभोग्य वस्तुएँ व सेवाएँ
5. 'हरित–लेखांकन' में किस पर विचार किया जाता हैं ?
   (अ) अंधाधुंध औद्योगीकरण पर
   (ब) तीव्र रोजगार वृद्धि पर
   (स) पर्यावरण की हानि पर
   (द) निजी–उपभोग में तीव्र वृद्धि पर

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. राष्ट्रीय आय की गणना की कितनी विधियाँ होती हैं ?
2. राष्ट्रीय आय की गणना के लिए किस प्रकार की वस्तुओं व सेवाओं को सम्मिलित करते हैं ?
3. राष्ट्रीय आय की दोहरी–गणना की त्रुटि से बचने के लिए कौन सी विधि अपनाते हैं ?
4. राष्ट्रीय आय की आय विधि से गणना के कौन–कौन से घटक होते हैं ?
5. 'हरित–लेखांकन' किसे कहते हैं ?
6. राष्ट्रीय–आय का बँटवारा किस प्रकार का होने पर आर्थिक कल्याण अधिक मात्रा में बढ़ता हैं ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. राष्ट्रीय आय की गणना की विधियों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. दोहरी–गणना की त्रुटि से बचने के लिए मूल्य–संवर्द्धन विधि किस प्रकार उपयोगी होती हैं ?उदाहरण देकर समझाइये।
3. आय विधि से राष्ट्रीय आय की गणना को संक्षेप में समझाइये।
4. राष्ट्रीय आय की गणना की कौन–कौन सी समस्याएँ होती हैं ?संक्षेप में समझाइये।
5. आर्थिक कल्याण व राष्ट्रीय–आय का वितरण में सम्बन्ध को संक्षेप में समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. राष्ट्रीय आय की गणना की विभिन्न विधियों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. उत्पादन–विधि से राष्ट्रीय आय की गणना को विस्तार से समझाइये।
3. व्यय–विधि से राष्ट्रीय आय की गणना का विस्तृत वर्णन कीजिए।
4. राष्ट्रीय आय में वृद्धि से आर्थिक कल्याण में वृद्धि होती है। क्या आप इस कथन से सहमत हैं अपने विचार लिखिए।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
द	स	ब	द	स

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय 17

मुद्रा : अर्थ, कार्य एवं महत्व
(Money : Meaning, Functions and Importance)

मुद्रा का आविष्कार मानवीय आविष्कारों में सबसे महत्वपूर्ण है। ज्ञान की प्रत्येक शाखा में एक महत्वपूर्ण आविष्कार हुआ है। जैसे– यन्त्रकला (Mechanics) में पहिये का, विज्ञान में आग का, राजनीति शास्त्र में वोट का, उसी प्रकार अर्थशास्त्र तथा मनुष्य के सामाजिक जीवन के व्यापारिक पक्ष में मुद्रा एक महत्वपूर्ण आविष्कार है।

आदिकाल में मनुष्य अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए प्रकृति पर निर्भर था। मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ उसने समूह में रहना सीखा। समूहों में रहते– रहते मनुष्यों ने अपनी रुचि, कौशल एवं क्षमता के आधार पर अलग–अलग व्यवसायों का चयन किया, जिनसे उनकी विभिन्न आवश्यकताऐं पूरी होने लगी। प्रारम्भिक काल में समूह छोटे होने के कारण मनुष्य अपनी आवश्यकता की वस्तुओं का लेन–देन सहज और सरल रूप में करने लगे। वस्तु के बदले वस्तु खरीदने–बेचने की इस व्यवस्था को वस्तु विनिमय प्रणाली कहा जाता है।

वस्तु विनिमय प्रणाली

वस्तु विनिमय प्रणाली के अन्तर्गत दो व्यक्तियों द्वारा परस्पर स्वयं के द्वारा उत्पादित अतिरिक्त वस्तु अथवा सेवा का लेन–देन किया जाता था। प्राचीन काल में मनुष्य केवल प्राथमिक व्यवसाय में ही संलग्न था, जैसे – कृषि, पशुपालन, मछली पालन व आखेट इत्यादि। अतः सामान्यतः अनाज के बदले वस्त्र, वस्त्र के बदले दूध, दूध के बदले अनाज अथवा पालतू पशुओं का भी क्रय–विक्रय इस प्रणाली के माध्यम से किया जाता था। यह व्यवस्था पूर्णतः आपसी समझ एवं विश्वास पर आधारित थी।

वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयाँ

मानव सभ्यताओं के विकास के साथ मनुष्यों के आर्थिक क्रिया कलाप बढ़ते चले गये और वस्तु विनिमय प्रणाली में अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न होने लगी, जिसके कारण इसका लोप हो गया। फलस्वरूप इसका स्थान मुद्रा व्यवस्था ने ले लिया। आइये कुछ प्रमुख कठिनाइयों को समझने का प्रयास करते हैं –

(1) दोहरे संयोग की कठिनाई :–

बाजार में वस्तु विनिमय तभी संभव हो सकता हैं जब दो व्यक्ति एक दूसरे के लिये उपयोगी वस्तुओं का लेन–देन करने हेतु तत्पर हों। ऐसा संयोग सदैव मिलना कठिन है। यदि एक किसान को अपने अतिरिक्त गेहूं के बदले चीनी खरीदनी हो तो उसे ऐसे व्यक्ति को तलाशना पड़ेगा जिसके पास अतिरिक्त चीनी विनिमय हेतु उपलब्ध हो, ऐसा संयोग आसानी से मिलना संभव हो यह आवश्यक नहीं होता था।

(2) वस्तु के मूल्य मापने में कठिनाई :–

विनिमय हेतु उपलब्ध अतिरिक्त वस्तु का मूल्य मापना कठिन कार्य हैं। लेन–देन अथवा विनिमय करने वाले दोनों व्यक्ति आपसी समझ एवं उपयोगिता के आधार पर वस्तुओं का विनिमय करते थे। वास्तव में प्रत्येक सौदे में वस्तुओं का नये सिरे से मोल–भाव करना अत्यन्त कठिन कार्य है।

(3) भावी बचत संभव नहीं :–

इस व्यवस्था में ऐसी वस्तुओं का भी लेन–देन होता था जिसका दीर्घकाल तक संचय करना कठिन होता था। विशेष तौर पर दूध, फल, सब्जियाँ आदि खाद्य पदार्थ भावी समय के लिए बचाकर नहीं रखें जा सकते। अतएव इस प्रणाली में अतिरिक्त उत्पादों की भावी बचत संभव नहीं थी।

(4) अविभाज्य वस्तु के विनिमय में कठिनाई :–

वस्तु विनिमय प्रणाली में प्रायः वस्तु विभाजन की समस्या भी उत्पन्न हो जाती थी। उदाहरण के लिए एक भैंस का विनिमय मूल्य चार बोरी गेहूँ हैं तो ऐसे में यदि किसान की जरूरत एक बोरी गेहूँ हैं तो वह अपनी भैंस (जो कि अविभाज्य है) को एक बोरी गेहूँ से विनिमय नहीं कर सकेगा।

(5) उधार के लेखे में कठिनाई :–

वस्तु विनिमय में सौदे तात्कालिक ही संभव हो पाते थे, यदि कोई व्यक्ति उधार रख कर वस्तु विनिमय के द्वारा प्राप्त करना चाहता था तो उधार रखी गई वस्तु की भावी कीमत कितनी होगी यह पता लगाना अत्यन्त कठिन कार्य था।

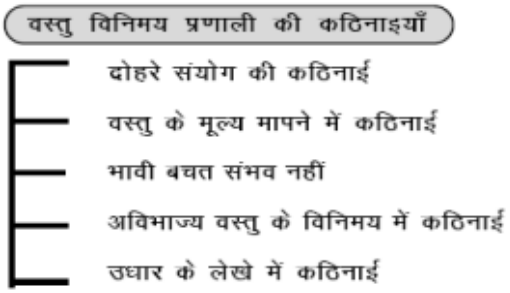

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

वस्तु विनिमय प्रणाली के अन्तर्गत उपरोक्त कठिनाइयों के कारण कालान्तर में इस व्यवस्था का लोप हो गया और मुद्रा का प्रादुर्भाव विनिमय के माध्यम के रूप में हुआ।

मुद्रा का प्रादुर्भाव

प्राचीन भारतीय इतिहास राजा–महाराजाओं का इतिहास रहा है। ऐसी राजव्यवस्था में समस्त आर्थिक एवं सामाजिक नीतियों के अंतिम निर्णयकर्ता राजा हुआ करते थे। यहाँ तक कि वे अपनी मोहर (राजकीय चिन्ह) जिस धातु या वस्तु पर टंकित कर देते थे वह राजकीय मुद्रा का रूप धारण कर लेती थी। सिक्कों का चलन इसी प्रणाली के विकास को दर्शाता हैं। देशकाल और परिस्थिति के अनुसार सोने, चाँदी, ताँबे व काँसे के सिक्के चलाये गये। इस प्रकार जारी मुद्रा 'सर्वग्राह्यता' एवं 'वैधानिकता' के गुणों के साथ विनिमय के माध्यम के रूप में स्वीकार की जाने लगी।

अर्थ एवं परिभाषा :–

मुद्रा को अंग्रेजी में मनी (Money) कहते हैं। इस 'MONEY' शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के 'मोनेटा' (Moneta) शब्द से हुई हैं। मोनेटा 'देवी जूनो' (Goodess Juno) का दूसरा नाम है। प्राचीन रोम में देवी जूनो को स्वर्ग की रानी कहकर संबोधित किया जाता था। उनका विचार था कि 'देवी जूनो' स्वर्ग का आनन्द देने वाली देवी हैं, ठीक उसी प्रकार देवी जूनो के मंदिर में बनाई गई मुद्रा (सिक्का) भी स्वर्गीय सुखों को देने वाली है।

विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने 'मुद्रा' की परिभाषा भिन्न–भिन्न प्रकार से दी है। अतः एक सर्वमान्य परिभाषा को जानना कठिन कार्य है, फिर भी अपने अध्ययन को व्यापक बनाने की दृष्टि से हम कुछ विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं को समझने का प्रयास करेंगे –

- हार्टले विदर्स :– ''मुद्रा वह सामग्री है, जिससे हम वस्तुओं का क्रय–विक्रय करते हैं।''
- नेप के अनुसार :– ''कोई भी वस्तु जो राज्य द्वारा मुद्रा घोषित कर दी जाती है, मुद्रा कही जाती है।''
- मार्शल के अनुसार :– ''मुद्रा में वे सब वस्तुएँ सम्मिलित की जाती हैं जो किसी विशेष समय अथवा स्थान में बिना संदेह या विशेष जाँच पडताल के वस्तुओं एवं सेवाओं को खरीदने तथा व्यय के भुगतान के साधन के रूप में, सामान्यतया स्वीकार की जाती हैं।
- सैलिगमैन के अनुसार :– ''मुद्रा वह वस्तु है जिसे सामान्य स्वीकृति प्राप्त हो।''
- किनले के अनुसार :– ''मुद्रा एक ऐसी वस्तु है, जिसे सामान्यतया विनिमय के माध्यम अथवा मूल्य के मान के रूप में स्वीकार एवं प्रयोग किया जाता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् हम मुद्रा के दो महत्वपूर्ण गुणों को मान सकते हैं, पहला – सामान्य स्वीकृति और दूसरा – वैधानिकता। इस प्रकार मुद्रा की सर्वमान्य परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है :–

मुद्रा एक ऐसी वस्तु है, जो विनिमय के माध्यम, मूल्य के मापक, स्थापित भुगतानों के मान तथा मूल्यों के संचय के साधन के रूप में स्वतंत्र, विस्तृत तथा सामान्य रूप से लोगों द्वारा स्वीकार की जा सकती है।

भारतीय रिजर्व बैंक अर्थव्यवस्था में मुद्रा की पूर्ति के वैकल्पिक मापों को चार रूपों में प्रदर्शित करता हैं –

$M_1 = C + DD + OD$

$M_2 = M_1 +$ डाकघर, बचत बैंकों में बचत जमाऐं

$M_3 = M_1 +$ व्यावसायिक बैंकों की निवल आवधिक जमाऐं

$M_4 = M_3 +$ डाकघर बचत संस्थाओं में कुल जमाऐं

यहाँ DD–माँग जमाऐं व्यापारिक एवं सहकारी बैंकों के पास

C–लोगों के पास रखी करन्सी (नोट व सिक्के)

OD–रिजर्व बैंक के पास अन्य जमाए

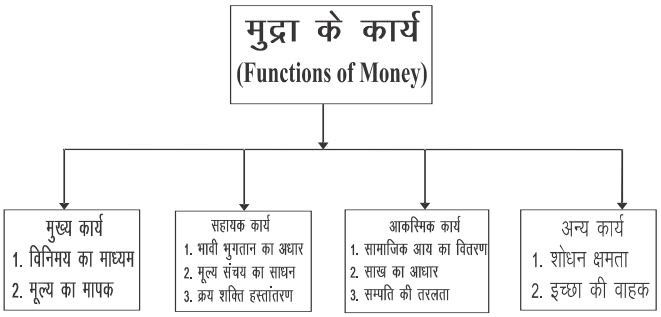

मुद्रा के मुख्य कार्य :– मुद्रा के मुख्य या प्राथमिक कार्य निम्नलिखित हैं –

1– विनिमय का माध्यम :–

यह एक ऐसा महत्वपूर्ण कार्य है जो इसकी प्रमुख पहचान भी है समस्त प्रकार के लेन–देन मुद्रा के माध्यम से ही सम्पन्न होते हैं क्योंकि मुद्रा में सर्वग्राह्यता का गुण विद्यमान होता है। बाजार में संव्यवहार प्रयोजन हेतु मुद्रा एक उपयुक्त माध्यम है।

2– मूल्य का मापक :–

यह दूसरा महत्वपूर्ण कार्य हैं। मुद्रा के माध्यम से ही वस्तु का मूल्य निर्धारण संभव होता हैं। वस्तु और सेवाओं के मूल्य मुद्रा के रूप में मापने से उनका विनिमय आसान हो जाता है। राष्ट्रीय आय की गणना भी सरल हो जाती है। व्यय विधि उत्पादन विधि और आय विधि द्वारा देश की राष्ट्रीय आय मुद्रा के रूप में सरलता से ज्ञात की जा सकती है।

- सहायक कार्य :– मुद्रा के सहायक कार्य, गौण कार्य अथवा

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

द्वितीयक कार्य ऐसे कार्य हैं जो आर्थिक सुगमता के लिए अब होने लगे हैं यद्यपि मुद्रा का आविष्कार इन कार्यों के लिए नहीं हुआ। ये सहायक कार्य इस प्रकार हैं –

1– भावी भुगतानों का आधार :–

ऐसे आर्थिक सौदे जिनका भुगतान भविष्य में किया जाना है तो मुद्रा ऐसे भावी भुगतानों के लिए आधार प्रदान करती है, अर्थात भविष्य में उस वस्तु की कीमत का अनुमान लगा लिया जाता है। अतः मुद्रा स्थगित भुगतान के आधार के रूप में भी कार्य करती हैं। जनता के विभिन्न प्रकार के ऋण जैसे – गृह ऋण, शिक्षा ऋण, उद्यम ऋण आदि का लेनदेन आसान हो जाता है। इसी प्रकार शेयर, डिबेन्चर और प्रतिभूतियों को खरीदना व बेचना भी मुद्रा के द्वारा सरल हो जाता है। मुद्रा एवं पूंजी बाजार का विकास संभव हो पाता है, जो एक अर्थ व्यवस्था को सुदृण बनाने के लिए आवश्यक होता है।

2– मुद्रा मूल्य संचय का साधन :–

मुद्रा के माध्यम से किसी ऐसी वस्तु जिसका टिकाऊपन कम है, बेचकर उसके मूल्य को भविष्य के लिए संचित कर रखा जा सकता हैं। मूल्य संचय तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन संभव हो पाता है। मुद्रा द्वारा क्रय की गयी जमीन, मकान, सोना, चांदी एवं बॉण्ड इत्यादि के रूप में मुद्रा का संचय किया जा सकता है। यद्यपि कभी–कभी मुद्रा के मूल्य में परिवर्तन होने पर लाभ व हानि की आशंका बनी रहती है।

3– क्रय शक्ति हस्तांतरण :–

मुद्रा के द्वारा एक व्यक्ति अपने द्वारा संचित क्रय शक्ति को आसानी से दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता है। इस प्रकार मुद्रा क्रय शक्ति हस्तांतरण के साधन के रूप में भी कार्य करती है। एक व्यक्ति नकद रूप में मुद्रा दूसरे व्यक्ति को सौंप कर क्रय शक्ति का हस्तान्तरण भी कर सकता है। आज के समय में नकदी विहीन अर्थव्यवस्था में कोई भी व्यक्ति डेबिट, क्रेडिट, एटीम अथवा चैक इत्यादि के माध्यम से भी अपनी क्रय शक्ति अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित सरलता से कर सकता है। इसके अतिरिक्त एक व्यक्ति स्वंय की खरीदी गई परिसम्पत्तियों को दूसरे व्यक्ति को बेच कर भी क्रय शक्ति का हस्तान्तरण कर सकता है। इस प्रकार मुद्रा की सहायता से व्यक्तियों के मध्य एवं विभिन्न स्थानों के मध्य परिसम्पत्तियों का क्रय शक्ति हस्तान्तरण सरलता से संभव हो जाता है।

- आकस्मिक कार्य :– मुद्रा के द्वारा कुछ ऐसे आकस्मिक कार्य भी सम्पादित किये जाते हैं जो मुद्रा को और भी उपयोगी एवं सुविधाजनक माध्यम के रूप में सिद्ध करते हैं। ये इस प्रकार है :–

1– राष्ट्रीय आय का वितरण :–

वर्तमान युग में बड़े पैमाने पर उत्पादन और उपभोग किया जाता है, जो कि मुद्रा के माध्यम से ही संभव है। राष्ट्रीय आय का अनुमान भी मुद्रा के मूल्य से लगाया जाता है तथा कुल उत्पादन से प्राप्त मूल्य का समाज के विभिन्न वर्गों को भुगतान भी मुद्रा से संभव है।

2– साख का आधार :–

बाजारीकरण के इस दौर में बैंको और वित्तीय संस्थाओं द्वारा अनेक प्रकार के ऋण उपलब्ध करवाये जाते हैं तथा जमाओं को भी स्वीकार किया जाता है। ये सभी कार्य मुद्रा के माध्यम से ही सम्पन्न हो सकते हैं।

3– सम्पति की तरलता :–

प्रो. जे. एम. कीन्स के अनुसार मुद्रा का एक महत्वपूर्ण कार्य पूँजी अथवा धन को तरल रूप प्रदान करना है। तरल रूप में मुद्रा का किसी भी कार्य में तत्काल प्रयोग किया जा सकता है।

- मुद्रा के अन्य कार्य :– मुद्रा के द्वारा उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त कुछ अन्य महत्वपूर्ण कार्य भी सम्पन्न किए जाते हैं, जो इस प्रकार हैं–

1– शोधन क्षमता सूचक :–

मुद्रा की उपलब्धता आर्थिक ऐजेंट (व्यक्ति या फर्म) की शोधन क्षमता की सूचक होती हैं। समाज में जिस भी किसी व्यक्ति के पास मुद्रा है उसके पास भुगतान करने की क्षमता (Pay to Ability) होती है।

2– मुद्रा इच्छा की वाहक :–

मुद्रा एक ऐसी वस्तु अथवा माध्यम है जो मनुष्य को अपनी इच्छानुसार आर्थिक निर्णय लेने में सहायता प्रदान करती है, मुद्रा की सहायता से व्यक्ति अपनी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। उपभोक्ता जिस वस्तु के लिये सबसे अधिक कीमत देने को तत्पर होता है। उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन बाजार में अधिक किया जाता है। इसीलिये पूँजीवाद में बाजार की प्रसिद्ध कहावत भी हैं – 'उपभोक्ता बाजार का राजा होता हैं।' (Consumer is the King to Market)

मुद्रा का महत्व (Importance of Money)

वर्तमान समय में मुद्रा आर्थिक परिक्षेत्र में एक महत्वपूर्ण घटक बन चुकी है। अतः मुद्रा के महत्व को हम निम्न बिन्दुओं के आधार पर समझ सकते हैं –

1. बाजार व्यवस्था की धुरी – आधुनिक समय में मुद्रा अर्थ व्यवस्था में विनिमय का सरल माध्यम है। अतः बाजार व्यवस्था में समस्त लेनदेन मुद्रा के माध्यम से किये जाते है।
2. आर्थिक विकास का मापक– मुद्रा देश की आर्थिक उन्नति एवं विकास का मापक है। लोक हितकारी सरकारें

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सार्वजनिक व्यय में वृद्धि करके विकास का मार्ग प्रशस्त करती है।

3. अर्थव्यवस्था की बचतों के निवेश परिवर्तन– अर्थ व्यवस्था में लोगों के द्वारा की जाने वाली बचतें मुद्रा के रूप में संग्रह करके बैंकों में जमा की जाती है जो भविष्य में निवेश का आधार बनती है।
4. श्रम विभाजन एवं विशिष्टीकरण– मुद्रा के माध्यम से देश में श्रम विभाजन व विशिष्टीकरण करके उत्पादन का उच्चतम स्तर प्राप्त किया जाता है जो मुद्रा से संभव हुआ है।
5. आर्थिक जीवन में स्वतंत्रता– मुद्रा के प्रयोग से उपभोक्ता एवं उत्पादक दोनों ही बाजार में विवेकानुसार निर्णय लेने में हेतु स्वतंत्र होते है।
6. सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार – मुद्रा अर्थ व्यवस्था में आर्थिक स्वतंत्रता के साथ–साथ मूल्य संग्रह की सुविधा भी प्रदान करती है जो सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार बनती है।

उपरोक्त बिन्दुओं से स्पष्ट है कि मुद्रा का आर्थिक क्षेत्र में अत्यधिक महत्व है, किन्तु फिर भी कुछ अर्थशास्त्री मुद्रा के प्रचलन को नियंत्रण में रखने की सलाह देते हैं क्योंकि अनियंत्रित होने पर यह मुद्रा स्फीति का कारण बनती है जिसके अर्थव्यवस्था को गंभीर परिणाम भुगतने पड़ते हैं, इसलिए किसी विद्वान ने ठीक ही कहा हैं कि ''मुद्रा एक अच्छी सेविका किन्तु बुरी स्वामिनी है।''

विमुद्रीकरण (Demonatization) -

एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके तहत देश का केन्द्रीय बैंक कालेधन अथवा नकली नोटों को चलन से बाहर करने के लिए चलन में पुरानी मुद्रा की वैधानिकता समाप्त कर नयी मुद्रा जारी कर देता है इस प्रकार अवैध तरीके से अर्जित कालाधन एवं नकली करेंसी स्वतः ही नष्ट हो जाती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- वस्तु के बदले वस्तु को खरीदना या बेचना वस्तु विनिमय कहलाता है।
- मुद्रा वह वस्तु है जिसे जनता द्वारा सामान्यतया विनिमय के माध्यम तथा मूल्य के मापक के रूप में स्वीकार किया जाता हो तथा समाज एवं सरकार उसे वैधानिक मान्यता देते हों।
- *मुद्रा के कार्य :–*

(1) मुख्य कार्य – विनिमय का माध्यम, मूल्य का मापक।
(2) सहायक कार्य – भावी भुगतानों का आधार, मूल्य संचय का साधन, क्रय शक्ति हस्तांतरण।
(3) आकस्मिक कार्य – सामाजिक आय का वितरण, साख का आधार, सम्पत्ति की तरलता।
(4) अन्य कार्य – इच्छा की वाहक, शोधन क्षमता सूचक।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न –

(1) निम्न में से M_2 ज्ञात कर सकते हैं।
(अ) M_1+ व्यावसायिक बैंकों की निवल आवधिक जमाऐं
(ब) M_3 + डाकघर बचत संस्थाओं में कुल जमाऐं
(स) C + DD
(द) M_1 + डाकघर बचत संस्थाओं में कुल जमाऐं

(2) निम्नलिखित में से कौन सा कार्य मुद्रा का मुख्य कार्य हैं–
(अ) विनिमय का माध्यम
(ब) नोटों का मापन
(स) बिलों का भुगतान
(द) साधनों की कार्य कुशलता

(3) मुद्रा का निम्न में से कौन सा कार्य नहीं हैं –
(अ) विनिमय का माध्यम (ब) मूल्य मापन
(स) साख का आधार (द) मूल्य स्थिरता

(4) वस्तु विनिमय की प्रमुख कठिनाई निम्न में से कौन सी है–
(अ) दोहरे संयोग का न मिलना
(ब) मुद्रा मूल्य ज्ञात न होना
(स) भावी बचत संभव न होना
(द) उपरोक्त सभी

(5) वस्तु के बदले वस्तु खरीदने की प्रक्रिया कहलाती हैं –
(अ) मुद्रा प्रणाली (ब) वस्तु मुद्रा प्रणाली
(स) वस्तु विनिमय प्रणाली (द) पत्र मुद्रा प्रणाली

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1– वस्तु विनिमय प्रणाली का अर्थ लिखिए।

2– मुद्रा को परिभाषित कीजिए।

3– मुद्रा के दो प्रमुख कार्यों को बताइये।

4– वस्तु विनिमय की कोई दो कठिनाइयाँ लिखिये।

5– मुद्रा उपभोक्ता को निर्णय का अधिकार किस प्रकार देती है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1– वस्तु विनिमय प्रणाली को एक उदाहरण देकर समझाइये।

2– मुद्रा के मूल्य से आप क्या समझते हैं।

3– वर्तमान युग में मुद्रा के महत्व को समझाइये।

4– मुद्रा के आकस्मिक कार्य कौन–कौन से हैं।

5– मुद्रा के दो सहायक कार्य लिखिये।

निबंधात्मक प्रश्न –

1– मुद्रा के प्रमुख कार्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

2– वस्तु विनिमय प्रणाली क्या हैं?इस प्रणाली के दोषों का वर्णन कीजिए।

3– मुद्रा का अर्थ एवं परिभाषा स्पष्ट करदते हुए इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
द	अ	द	द	स

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय 18
व्यापारिक बैंक–अर्थ एवं कार्य
(Commercial Bank - Meaning & Functions)

वर्तमान युग में 'बैंक' एक सर्वप्रचलित एवं सर्वोपयोगी शब्द है, जिसके अर्थ से साधारणतया सभी अवगत हैं, किन्तु इसके इतिहास की तरफ जाएँ तो पता चलता है कि 'बैंक' शब्द की व्युत्पत्ति इटेलियन भाषा के 'बंकों' (BANCO) शब्द से हुई हैं, इटली में लोग बैंचों पर बैठकर मुद्रा परिवर्तन का कार्य करते थे। कालांतर में जो फ्रांसीसी भाषा के 'बैंके' (BANK) में बदलता हुआ अंग्रेजी भाषा में 'बैंक' (BANK) कहा जाने लगा। कालान्तर में 'बैंक' शब्द का प्रयोग मुद्रा का लेन–देन करने वाली संस्थाओं के लिए किया जाने लगा।

एक अन्य धारणा के अनुसार 'बैंक' शब्द की व्युत्पति जर्मन भाषा के 'BANCK' (बैंक) शब्द से हुई हैं जिसका अर्थ होता है – ''सम्मिलित स्कंध कोष (Joint Stock Fund) अतः बैंक शब्द की उत्पत्ति के बारे में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता।

आधुनिक बैंकिंग का विकास यूरोप में हुआ था, तत्पश्चात यह समूचे विश्व में फैल गया।

बैंक की परिभाषा :–

बैंक शब्द का अर्थ एवं कार्य स्पष्ट करते हुए अनेक अर्थशास्त्रियों ने इसकी परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं, जो इस प्रकार हैं–

फिण्डले शिराज के अनुसार – ''बैंकर, वह व्यक्ति फर्म या कम्पनी हैं जिसके पास व्यवसाय के लिए ऐसा स्थान हो जहाँ मुद्रा अथवा करेंसी की जमा द्वारा साख का कार्य किया जाता है और जिसकी जमा का ड्राफ्ट, चैक या आर्डर द्वारा भुगतान किया जाता है।''

क्राउथर के अनुसार :– ''बैंक का कार्य अन्य लोगों से ऋण लेकर बदले में अपना ऋण प्रदान करके मुद्रा का निर्माण करना है।''

भारतीय बैंकिंग कम्पनीज एक्ट (1949) :–

''बैंकिंग से तात्पर्य ऋण देने अथवा विनियोजन के लिए जनता का धन जमा करना है, जो माँग करने पर लौटाया जा सकता है तथा चैक, ड्राफ्ट अथवा अन्य प्रकार की आज्ञा द्वारा निकाला जा सकता है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट है कि – बैंक एक ऐसी संस्था है जो अपने ग्राहकों को धन सम्बन्धी समस्त लेन–देन की सुविधा प्रदान करती है।

व्यापारिक बैंक के कार्य :–

व्यापारिक बैंक का कार्यक्षेत्र वर्तमान युग में बहुत विस्तृत हो गया हैं। ये बैंक अपने ग्राहकों को अनेक प्रकार की सुविधाऐं प्रदान करते हैं। वित्तीय समाशोधन के अतिरिक्त, ग्राहकों को बीमा, लॉकर सुविधा, निवेश आदि के अवसर भी प्रदान करते हैं। परम्परागत रूप से बैंकों के द्वारा किये जाने वाले प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं –

1. जमाएं स्वीकार करना
2. ऋण प्रदान करना
3. साख निर्माण
4. एजेंसी सेवाऐं
5. अन्य सेवाऐं

1. जमाएं स्वीकार करना :–

व्यापारिक बैंकों का प्रमुख कार्य अपने ग्राहकों की जमाएं स्वीकार करना है। ग्राहक अपने चालू अथवा बचत खातों में अपनी छोटी–छोटी बचतें जमा करवाता हैं। बैंक ऐसी छोटी–छोटी बचतों से एकत्रित कोषों पर अपने ग्राहकों को ब्याज अदा करता है।

बचत खाता:–

इस प्रकार के खाते छोटे बचतकर्ता अथवा नौकरीपेशा लोग बैंकों में खुलवाते हैं। इन जमाओं पर बैंक एक निश्चित दर से ब्याज भी अदा करता है। इसमें ब्याज दर कम होती है।

चालू खाते :–

इस प्रकार के खाते व्यापारी अथवा उद्योगपति बैंकों में खुलवाते हैं, जिनका दैनिक नकद लेन देन अधिक होता है। इन जमाओं पर बैंक एक न्यूनतम दर से ब्याज भी अदा करता है।

अवधि जमाएँ :–

बैंकों द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए जो जमाएँ स्वीकार की जाती हैं उन्हें अवधि जमाएँ (Fixed Deposit) कहते हैं, इन पर ब्याज की दर ऊँची होती है।

मांग जमाएँ :–

जबकि माँग जमाऐं, वे जमाऐं होती हैं जो ग्राहक के द्वारा किसी भी समय माँगे जाने पर बैंकों को अदा करनी पड़ती हैं, ऐसी जमाओं पर ब्याज दर कम होती हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

वर्तमान दौर में आम लोगों को बैंकिंग सुविधा उपलब्ध करवाने हेतु 'प्रधानमंत्री जन धन योजना' के अन्तर्गत शून्य राशि पर भी खाते बैंकों द्वारा खोले जाते हैं। इन खातों में नियमित लेन देन करने वाले ग्राहकों को बैंक 5000 रु. तक की अधिविकर्ष सुविधा प्रदान करते हैं।

2– ऋण प्रदान करना :–

व्यापारिक बैंकों का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य ऋण प्रदान करना है। बैंक अपने ग्राहकों को ऋण सुविधा प्रदान करता है। ये बैंक मुख्यतः गृह , शिक्षा , विवाह एवं वाहन इत्यादि हेतु ऋण प्रदान करते हैं। बैंक अपने ग्राहकों की जमाओं से एकत्रित राशि से ही साख सृजन का कार्य करता हैं। ऋण चुकाने के लिए बैंकों द्वारा अपने ग्राहकों को एक निश्चित समयावधि का विकल्प प्रदान किया जाता हैं। प्रायः परिसम्पति हेतु दिए जाने वाले ऋण दीर्घकालीन ऋण होते हैं। बैंक द्वारा कमजोर वर्गों के लिये विभिन्न सरकारी योजनाओं के तहत सरल ऋण उपलब्ध करवाये जाते हैं।

अधिविकर्ष –

सुविधा के अन्तर्गत व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को उनके खातों पर अधिविकर्ष सीमा उपलब्ध करवाती है। अल्प समय के लिए ग्राहक उस सीमा तक जमा धन से अधिक राशि निकलवा सकते है। यह सुविधा बैंक अपने प्रतिष्ठित साख वाले व्यवसायी वर्ग के ग्राहकों को ही उपलब्ध करवाती है।

3. साख निर्माण –

व्यापारिक बैंक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य साख सृजन है। अन्य वित्तीय संस्थाओं के समान उनका उद्देश्य भी लाभ कमाना होता है। बैंक अपने जमाधारकों से प्राप्त जमाओं से एकत्र राशि को ऋण के रुप में अन्य ग्राहकों को उपलब्ध करवाती है, जिस पर नियत दर से ब्याज भी वसूल करती है। इसे ही बैंकों की साख निर्माण प्रक्रिया कहते हैं, जिसे हम आगे विस्तार से जानेंगे।

4. एजेन्सी सेवाएं –

व्यापारिक बैंकों द्वारा ग्राहकों को ऐजेन्सी सेवाएं भी उपलब्ध करवाई जाती है। बैंक चैक, विनिमय बिल, ड्राफ्ट इत्यादि को स्वीकार /जमाकर अपने ग्राहकों को ऐजेन्सी के रुप में वित्तीय सुविधा प्रदान करते हैं। व्यापारिक बैंक अपने खाताधारकों की सम्पत्ति और वसीयत के कार्यकारक (executor) और न्यासी (Trustee) के रुप में भी कार्य करता है।

वाहक चैक (Bearer Cheque) –

इस प्रकार के चैक का नकद भुगतान बैंक चैक प्रस्तुत करने वाले वाहक को कर सकता है।

रेखांकित चैक (Cross Cheque) -

इस प्रकार के चैक का भुगतान बैंक चैक में अंकित नाम वाले व्यक्ति के खाते में करता है।

5. अन्य सेवाएं :–

(I) इंटरनेट बैंकिंग :– व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को 24 घंटे अपनी सेवाएँ देने के लिए इंटरनेट बैंकिंग सेवाएँ प्रदान करते हैं। इसके द्वारा ग्राहक घर बैठे अपने खातों से विभिन्न सेवाओं का शुल्क भुगतान आसानी से कर सकते हैं। इंटरनेट बैंकिंग के द्वारा ऑनलाइन शॉपिंग हेतु घर बैठे भुगतान किया जा सकता है। इस हेतु ग्राहकों को बैंक से Login ID और Passward जारी किया जाता हैं जो पूर्णतया गोपनीय रखना होता है।

(ii) ATM सुविधा :– व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को 24 घंटे नकद आहरण की सुविधा प्रदान करने हेतु सार्वजनिक स्थानों (बस स्टैण्ड, रेल्वे स्टेशन, हॉस्पिटल, हवाई अड्डों) पर ATM मशीन उपलब्ध करवाते हैं। कोई भी ग्राहक अपने ATM कार्ड से प्रतिदिवस निर्धारित सीमा तक राशि आहरित कर सकता है। इसके अतिरिक्त ATM नकद हस्तांतरण व खाते में नकद शेष की जानकारी भी उपलब्ध करवाता है। इसका पूरा अर्थ ATM - Automated Teller Machine है। यह पूर्णतया कम्प्यूटरीकृत मशीन होती है जो बैंक के सर्वर से जुड़ी होती है।

(iii) मोबाइल बैंकिंग :– वर्तमान युग में 'स्मार्टफोन' का प्रचलन बढ़ने से व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को 'मोबाइल ऐप' के माध्यम से भी बैंकिंग सुविधा प्रदान करते हैं। ग्राहक अपने बैंक से सम्बन्धित एप गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड कर सुविधा का लाभ उठा सकता है। इंटरनेट बैंकिंग की तरह एक User ID और Passward के जरिये ग्राहक सभी प्रकार के भुगतान अपने मोबाइल से कहीं भी कभी भी कर सकता है।

(iv) लॉकर सुविधा :–व्यापारिक बैंक निश्चत शुल्क पर अपने ग्राहकों को कीमती सामान को सुरक्षित रखने के लिए अपने बैंक में लॉकर सुविधा प्रदान करता है। लोग इसमें कीमती जेवरात, जमीन के कागजात व कानूनी दस्तावेज आदि सुरक्षित रखते हैं।

(v) क्रेडिट कार्ड सुविधा :– व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को 'क्रेडिट कार्ड ' के माध्यम से भी बैंकिंग सुविधा प्रदान करते हैं, इसके अन्तर्गत व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को उनके खातों पर एक निश्चत साख सीमा में कार्ड द्वारा भुगतान की सुविधा उपलब्ध करवाते हैं। क्रेडिट कार्ड के माध्यम से कहीं भी कभी भी अल्प समय में ऑन लाइन भुगतान कर सकते हैं।

व्यापारिक बैंक द्वारा साख सृजन

आधुनिक बैंकिंग प्रणाली में साख का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के आर्थिक विकास में बैंकों की बड़ी भूमिका है। जहाँ बैंक एक ओर जनता से प्राप्त छोटी–छोटी बचतों के जमाकर्ता के रूप में कार्य करता है वहीं यह इन छोटी – छोटी बचतों से तैयार जमाओं से साख निमार्ण का कार्य करते हुए उत्पादक कार्यों के लिए ऋण प्रदान करता हैं। अब हम समझने का प्रयास करते हैं कि व्यापारिक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

बैंक साख का निर्माण किस प्रकार करते हैं।

साख का निर्माण :–

बैंक साख सृजन का कार्य दो विधियों से करते हैं–

(1) कागजी मुद्रा के निर्गमन द्वारा

(2) प्रारम्भिक जमा और व्युत्पन्न जमाओं द्वारा

(1) कागजी मुद्रा के निर्गमन द्वारा :– वर्तमान युग में देश के केन्द्रीय बैंक को ही मुद्रा जारी करने का एकाधिकार प्राप्त है। भारत में नोट निर्गमन का कार्य भारतीय रिजर्व बैंक करता है। इसके लिये यह न्यूनतम कोष प्रणाली का उपयोग करता हैं। अतः यह केन्द्रीय बैंक द्वारा साख का निर्माण करना कहलाता हैं।

(2) व्युत्पन्न जमाओं द्वारा साख सृजन :– बैंक मुद्रा अथवा साख मुद्रा का संबंध बैकों के पास जमा की गई उन छोटी–छोटी बचत राशियों से आंकता हैं, जो चैक द्वारा निकलवाई जा सकती हैं। ये राशि माँग पर देय होती है, अतः इन्हें मांग जमा कहते हैं। इस प्रकार की माँग जमाओं के बढ़ने से ही अपनी कुल जमाओं से कई गुणा अधिक उधार देकर साख मुद्रा का निर्माण करते हैं। इस प्रकार बैंक जितना अधिक ऋण देता है उतनी ही अधिक साख जमाएँ उत्पन्न होती हैं और अधिक ऋणों का निर्माण होता है। इसलिए कहा जाता हैं –''ऋण जमाओं को उत्पन्न करते हैं और जमाएँ ऋणों को जन्म देती हैं।''

प्रो. होम के अनुसार – ''व्युत्पन्न जमा का निर्माण ही साख का सृजन होता हैं।'' इस प्रकार व्यापारिक बैंक उनके पास जितनी राशि जमा के रूप में प्राप्त होती हैं उससे कई गुणा अधिक साख सृजन कर देते हैं। प्रो. होम के अनुसार बैंक जमाएं दो प्रकार की होती हैं – प्रारम्भिक बैंक जमाएं तथा द्वितीय व्युत्पन्न जमाएं।

प्रारम्भिक जमाएँ :– वे जमाएँ होती हैं जो जमाकर्ता द्वारा वास्तविक मुद्रा के रूप में बैंक में जमा की जाती हैं।

व्युत्पन्न जमाएँ :– वे जमाएँ हैं जो बैंक प्रारम्भिक जमाओं से प्राप्त राशियों से ऋण खाता खोलकर ऋण राशि जमा करता है।

अतः एक प्रारम्भिक जमा से कई व्युत्पन्न जमाएँ उत्पन्न होती जाती हैं। ये व्युत्पन्न जमाएँ साख जमाएँ कहलाती हैं।

साख सृजन की प्रक्रिया :–

बैंकों के साख सृजन की प्रक्रिया को निम्नांकित उदाहरण द्वारा आसानी से समझा जा सकता हैं –

चरण 1– मान लीजिए कि किसी व्यापारिक बैंक में प्रारम्भिक जमा 10000 रुपये होती है। बैंकों का नकद कोषानुपात 20% है तो बैंक ऋण प्रावधानों के अनुसार अपनी प्रारम्भिक जमा का 20% (यानी 2000) रखकर शेष राशि 8000 रुपये का ऋण दे सकता है। यदि बैंक किसी व्यक्ति को 8000 रुपये का ऋण जारी करता हैं। यह साख जमा पुनः ऋण के रूप में दी जा सकती हैं। इस प्रकार प्रत्येक ऋण जमा को जन्म देता है।

चरण 2– अब 8000 रुपये में से बैंक पुनः 20% (यानी 1600) नकद कोष में रखकर शेष राशि 6400 रुपये का ऋण दे सकता है। इस प्रकार बैंक दूसरे किसी अन्य व्यक्ति को 6400 रुपये का ऋण स्वीकृत कर देता है और उसके खाते में राशि जमा कर देता है।

चरण 3– अब इन 6400 रुपये में से बैंक पुनः 20% (यानी 1280) नकद कोष में रखकर शेष राशि 5120 रुपये का ऋण दे सकता है। इस प्रकार बैंक तीसरे किसी व्यक्ति को 5120 रुपये का ऋण स्वीकृत कर देता है और उसके खाते में यह राशि जमा कर देता है।

इस प्रकार प्रारम्भिक जमा 10000 रुपये की जमा राशि से बैंक साख सृजन की यह प्रक्रिया चालू करते हैं और व्युत्पन्न जमा के माध्यम से बैंक प्रारम्भिक जमा से भी अधिक धन राशि की साख प्रदान कर देते हैं। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक बैंक अपनी प्रारम्भिक जमाओं का पाँच गुणा (20% आरक्षित अनुपात) साख सृजन नहीं कर देती।

साख सृजन की इस प्रक्रिया को और भी अधिक स्पष्ट करने के लिए उपर्युक्त उदाहरण को तालिका में दर्शाया गया हैं–

तालिका 18.1

बैंक द्वारा साख सृजन की प्रक्रिया			
परिसम्पत्तियाँ			देयताएं (राशि रूपयों में)
चरण	जमाएं	नकद कोष (20%)	प्रदत्त ऋण / व्युत्पन्न जमाएं
I	10000	2000	10000-2000 = 8000
II	8000	1600	8000-1600 =6400
III	6400	1280	6400-1280 = 5120
IV	5120	1024	5120-1024 = 4096
V	4096	819.2	4096-819.2 = 3276.8
	.....	.....	.....
योग	ΣTd = 50000	ΣRr = 10000	Σ Dd = 40000

कुल व्युत्पन्न जमाएं = कुल जमाएं – कुल कोषानुपात

(संकेत में) $\Sigma Dd = \Sigma Td - \Sigma Rra$

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि व्यापारिक बैंक किस प्रकार प्रारम्भिक जमा से व्युत्पन्न जमाएँ उत्पन्न कर अपनी साख की राशि को कई गुणा बढ़ा देते हैं। बैंकों द्वारा कितनी व्युत्पन्न जमाएँ सृजित की जाएंगी यह साख गुणंक पर निर्भर करता है। उपर्युक्त उदाहरण में 20% CRR है अर्थात 1/5 हैं। अतः कुल साख सृजन 50000 रुपये का होगा। क्योंकि जमा गुणक $=\frac{1}{RR_r}$ जहां RR_r = आवश्यक रिजर्व अनुपात है। जमा गुणक एक बैंक द्वारा जमा प्रसार को निर्धारित करता है। उपरोक्त उदाहरण में बैंक के पास 10000 रू. जमाएं हैं, और CRR 20% है तो जमा गुणक होगा।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

$$\frac{1}{RR_r} = \frac{1}{20\%}$$
$$= \frac{1}{\cdot 20}$$
$$= \frac{100}{20} = 5$$

और साख निर्माण होगा $\frac{1}{RR_r} \times D = 5 \times 10{,}000$
$= 50{,}000$

इसी प्रकार व्युत्पन्न जमाएं हम कुल जमाओं में से कुल कोषानुपात के राशि घटाने पर प्राप्त कर सकते हैं।

व्युत्पन्न जमाएं = कुल जमाएं – कुल कोषानुपात
50,000 रू. – 10,000 रू.
= 40,000 रू.

साख सृजन की सीमाएँ :– बैंक असीमित मात्रा में साख सृजन नहीं कर सकते। अनेक आर्थिक दशाओं का इस पर सीधा प्रभाव पड़ता है। बैंकों की साख सृजन की प्रक्रिया की कुछ सीमाएँ इस प्रकार हैं –

1. बैंकिंग विकास का स्तर :– जिन देशों में बैंकिंग सेवाएं पर्याप्त विकसित नहीं है वहां बैंकों की साख सृजन क्षमता सीमित होती है।
2. आम लोगों की बैंकिंग की आदत :– देश के लोगों में बैंकिंग आदतों का भी साख सृजन क्षमता पर सीधा प्रभाव पड़ता है।
3. व्यावसायिक व औद्योगिक विकास का स्तर :– जो देश उच्च औद्योगिक विकास को प्राप्त कर चुके हैं वहां बैंक लेन–देन विकसित होने से साख सृजन क्षमता अधिक होती है।
4. केन्द्रीय बैंक की मौद्रिक नीति :– सरल मौद्रिक नीति देश में साख सृजन को बढ़ावा देती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- भारतीय बैंकिंग कम्पनीज एक्ट (1949) :– ''बैंकिंग से तात्पर्य ऋण देने अथवा विनियोजन के लिए जनता का धन जमा करना है, जो माँग करने पर लौटाया जा सकता है तथा चैक, ड्राफ्ट अथवा अन्य प्रकार की आज्ञा द्वारा निकाला जा सकता है।''
- बैंकों द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए जो जमाएँ स्वीकार की जाती हैं उन्हें अवधि जमाएँ (Fixed Deposit) कहते हैं, इन पर ब्याज की दर ऊँची होती है।
- माँग जमाऐं वे जमाऐं होती हैं जो ग्राहक के द्वारा किसी भी समय माँगे जाने पर बैंकों को अदा करनी पड़ती हैं, ऐसी जमाओं पर ब्याज दर कम होती है।
- व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को 24 घंटे अपनी सेवाएँ देने के लिए इंटरनेट बैंकिंग सेवाएँ प्रदान करते हैं। इसके द्वारा ग्राहक घर बैठे अपने खातों से विभिन्न सेवाओं का शुल्क भुगतान आसानी से कर सकते हैं।
- ATM - Automated Teller Machine होती है। यह पूर्णतया कम्प्यूटरीकृत मशीन होती है जो बैंक के सर्वर से जुड़ी होती है।
- वर्तमान युग में 'स्मार्टफोन' का प्रचलन बढ़ने से व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को 'मोबाइल ऐप' के माध्यम से भी बैंकिंग सुविधा प्रदान करते हैं।
- व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को उनके खातों पर अधिविकर्ष सीमा उपलब्ध करवाती है, अल्प समय के लिए ग्राहक उस सीमा तक जमा धन से अधिक राशि निकलवा सकते हैं।
- व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को क्रेडिट कार्ड के माध्यम से भी बैंकिंग सुविधा प्रदान करते हैं इसके अन्तर्गत व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को उनके खातों पर एक निश्चत साख सीमा में कार्ड द्वारा भुगतान की सुविधा उपलब्ध करवाते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

(1) व्यापारिक बैंक का प्रमुख कार्य है –
(अ) जमाएं स्वीकार करना तथा ऋण प्रदान करना
(ब) नोट निर्गमन करना
(स) सरकार के बैंकर का कार्य
(द) बैंकों को आर्थिक सहायता पहुँचाना

(2) निम्नलिखित में से कौनसे जमा खाते में सर्वाधिक ब्याज दर देय है –
(अ) चालू खाता (ब) आवर्ति जमा खाता
(स) बचत खाता (द) स्थायी जमा खाता

(3) ATM सुविधा क्या है –
(अ) 24 घण्टे बैंक काउंटर खुला रखना
(ब) बैंक से तत्काल ऋण सुविधा
(स) स्वचालित कम्प्युटरीकृत मशीन से 24 घण्टे बैंकिंग सुविधा
(द) बैंक का सामान्य टैलर काउण्टर

(4) मोबाइल बैंकिंग के लिये आवश्यक है–
(अ) स्मार्टफोन (ब) इंटरनेट
(स) बैंक अकाउंट (द) उपर्युक्त सभी

(5) कौनसी योजना के तहत लोग अपना खाता बैंक में निशुल्क खुलवा सकते हैं –
(अ) प्रधानमंत्री स्वरोजगार योजना
(ब) प्रधानमंत्री जन धन योजना
(स) प्रधानमंत्री राहतकोष योजना

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(द) राष्ट्रीय बचत योजना

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. व्यापारिक बैंक की परिभाषा लिखिए।
2. व्यापारिक बैंक के कोई दो कार्य लिखिए।
3. अधिविकर्ष को समझाइये।
4. इंटरनेट बैंकिग क्या है?
5. **ATM** का पूरा नाम लिखिये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. बचत खाते और चालू खाते के अंतर को समझाइये।
2. व्यापारिक बैंक के प्रमुख कार्य लिखिये।
3. मोबाइल बैंकिंग क्या है? समझाइये।
4. वर्तमान में बैंकों द्वारा उपलब्ध करवाई जाने वाली कोई दो सेवाओं का वर्णन कीजिये।
5. व्यापारिक बैंकों द्वारा की जाने वाली साख सृजन की सीमाऐं लिखिये।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. व्यापारिक बैंक की परिभाषा लिखिए। व्यापारिक बैंकों के कार्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. साख सृजन किसे कहते हैं? व्यापारिक बैंकों द्वारा की जाने वाली साख सृजन की प्रक्रिया को विस्तार से समझाइये।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
अ	द	स	द	ब

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय 19

केन्द्रीय बैंक : कार्य एवं साख नियंत्रण
(Central Bank : Functions and Credit Control)

केन्द्रीय बैंक–

प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था के बैंकिंग और मौद्रिक क्षेत्र को नियमित एवं नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण कार्य उसका केन्द्रीय बैंक करता है। यह देश में सुस्थिर आर्थिक विकास, पूर्ण रोजगाार, मूल्य–स्थिरता एवं सुदृढ़ भुगतान संतुलन को स्थिर बनाये रखने के लिये उत्तरदायी होता है। केन्द्रीय बैंक सभी बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को निर्देश जारी करता है। अमेरिका में यह 'फेडरल रिजर्व बैंक' इंग्लैण्ड में 'बैंक ऑफ इंग्लैण्ड' और भारत में यह भारतीय रिजर्व बैंक (Reserve Bank of India) के नाम से जाना जाता है। केन्द्रीय बैंक प्रत्येक देश का शीर्षस्थ (Apex) बैंक होता है। एम. एच. डी. कॉक के अनुसार 'केन्द्रीय बैंक वह होता हैं जो अपने देश की मौद्रिक व बैंकिग ढाँचे का सिरमौर होता है।'

केन्द्रीय बैंक की परिभाषा–

केन्द्रीय बैंक को अनेक विद्वानों ने अपने–अपने दृष्टिकोणों से परिभाषित करने का प्रयास किया है –

ए. सी. एल. डे के अनुसार :– ''केन्द्रीय बैंक वह बैंक है, जो मौद्रिक एवं बैंकिंग प्रणाली को नियंत्रित एवं स्थिर करने में सहायक होता हैं।''

सैम्यूलसन के अनुसार :– ''एक केंन्द्रीय बैंक, बैंकों का बैंक है, जिसकी जिम्मेदारी मौद्रिक आधार के नियंत्रण की होती है और उच्च शक्तिशाली मुद्रा नियंत्रण करता है।''

इस प्रकार स्पष्ट है केन्द्रीय बैंक किसी भी देश की वह शीर्ष संस्था है जो मौद्रिक व बैंकिग क्षेत्र को नियंत्रित करने के लिए अधिकृत होती हैं।

भारत में उक्त भूमिका भारतीय रिजर्व बैंक अदा करता है। यह देश की सम्पूर्ण मौद्रिक एवं वित्तीय क्षेत्र का नियामक होता है। साथ ही करेंसी जारी करने से लेकर बैंकिग संस्थाओं को अनुज्ञा पत्र जारी करने का अधिकार भी इसे प्राप्त है। इस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था में इसे एक शीर्ष बैंक अथवा केन्द्रीय बैंक के रूप में जाना जाता हैं।

केन्द्रीय बैंक के कार्य

केन्द्रीय बैंक के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं –

(1) करेंसी का निर्गमन
(2) बैंको का बैंक एवं नियंत्रणकर्ता
(3) सरकार का बैंकर एवं सलाहकार
(4) अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय कोषों का संरक्षक
(5) अन्तिम ऋण दाता
(6) केन्द्रीय समाशोधन
(7) साख का नियमन एवं नियंत्रण

(1) करेंसी का निर्गमनः–

केन्द्रीय बैंक वैधानिक रूप से देश की मुद्रा (नोट) का निर्गमन एवं संचालन का कार्य प्रमुख रूप से करता है। भारत में नोट निर्गमन का एकाधिकार भारतीय रिजर्व बैंक के पास है, जिससे नोटों में एक रूपता तथा विनिमय में सुविधा बनी रहती है। देश में पर्याप्त मात्रा में नोट जारी करने के लिए न्यूनतम कोष प्रणाली (Minimum Reserve System) का उपयोग किया जाता है, जिसके अन्तर्गत अर्थव्यवस्था में निर्गमित कुल मुद्रा की एवज में न्यूनतम कोष रिजर्व बैंक को अपने पास जमा रखना पड़ता हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक का देश में करेंसी संचालन पर प्रत्यक्ष रूप से नियन्त्रण होता हैं।

न्यूनतम कोष प्रणालीः–

इस प्रणाली के अन्तर्गत भारत में रिजर्व बैंक अपने पास 115 करोड़ रुपये का सोना और 85 करोड़ की विदेशी प्रतिभूतियाँ सदैव रिजर्व में रखता हैं इस प्रकार दो सौ करोड़ रुपये का न्यूनतम कोष रिजर्व में रखने के पश्चात भारतीय रिजर्व बैंक किसी भी सीमा तक नोट जारी कर सकता है। भारत में 1956 से ही इस प्रणाली का उपयोग नोट निर्गमन हेतु किया जा रहा है।

(2) बैंकों का बैंक एवं नियंत्रणकर्ता :–

केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के समस्त वित्तीय क्रिया–कलापों का नियमन एवं नियंत्रण करता है। सभी व्यापारिक बैंकों को अपनी कुल जमाओं का एक निश्चित प्रतिशत भाग केन्द्रीय बैंक के पास अनिवार्य रूप से रखना पड़ता है। देश की बैंकिंग प्रणाली को उन्नत बनाने के लिये केन्द्रीय बैंक समय–समय पर दिशा–निर्देश जारी करता है। बैंको के मध्य किसी प्रकार के विवाद को निपटाने में यह निर्णयकर्ता की भूमिका अदा करता हैं। केन्द्रीय बैंक देश के बैंकिग ग्राहकों के हितों को भी संरक्षण प्रदान करता है। भारत में रिजर्व बैंक ग्राहकों से सीधे शिकायत प्राप्त होने पर संबधित बैंक को दिशा–निर्देश जारी करता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(3) सरकारी बैंकर, एजेन्ट एवं सलाहकार :–

केन्द्रीय बैंक देश की ऊँची विकास दर प्राप्त करने में सहयोगी भूमिका अदा करता है। आर्थिक विकास हेतु नीति निर्माण में सलाहकार का कार्य करता है। केन्द्रीय बैंक सरकार की ओर से धन जमा करता है एवं जरूरत पड़ने पर सरकार की तरफ से भुगतान भी करता है। भारत में इसी प्रकार रिजर्व बैंक केन्द्रीय बैंक के रूप में सरकार के सलाहकार की भूमिका अदा करता है। देश की मौद्रिक नीति की घोषणा इसी प्रयोजन हेतु केन्द्रीय बैंक द्वारा समय–समय पर की जाती है।

(4) अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय कोषों का संरक्षक :–

केन्द्रीय बैंक देश के लिये विदेशी विनिमय कोषों का संरक्षक भी होता है। यह विनिमय कोषों के संरक्षण के साथ–साथ भुगतान कोषों को संवर्धित करने का कार्य भी करता है। यह विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त विदेशी मुद्रा को जमा करता है तथा आवश्यकता पड़ने पर सरकार की ओर से अदायगी भी करता है। विदेशी मुद्रा की तुलना में घरेलू मुद्रा की विनिमय दर को स्थिर बनाये रखने का कार्य भी केन्द्रीय बैंक द्वारा किया जाता है जिसके लिये 'अवमूल्यन' अथवा 'अधिमूल्यन' उपकरणों का उपयोग किया जाता है। भारत में यह कार्य रिजर्व बैंक सम्पादित करता है।

(5) अन्तिम ऋण दाता :–

केन्द्रीय बैंक देश का शीर्षस्थ बैंक होने के साथ – साथ अपने अधीनस्थ बैंकों के लिए वित्तीय संकट की स्थिति में अंतिम ऋण दाता की भूमिका भी अदा करता है। अधीनस्थ बैंकों को उनकी प्रतिभूतियों की एवज में तत्काल केन्द्रीय बैंक ऋण उपलब्ध करवाता है।

(6) केन्द्रीय समाशोधन :–

केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के नकद कोषो का संरक्षक होने के कारण अपने अधीनस्थ बैंको के लिये समाशोधन बैंक का कार्य भी करता है। व्यापारिक बैंको के आपसी लेन–देन इत्यादि का समाशोधन केन्द्रीय बैंक के माध्यम से बिना नकद राशि का भुगतान किये खातों के माध्यम से हो जाते हैं। केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंक को एक स्थान से दूसरे स्थान पर राशि स्थानान्तरित करने में भी माध्यम बनता है। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक भुगतानों एवं राशि स्थानान्तरण हेतु केन्द्रीय समाशोधन का माध्यम बनता हैं।

(7) साख का नियमन एवं नियंत्रण :–

देश में मुद्रा की पूर्ति के परिमाण और साख की मात्रा दोनों को नियंत्रित करने का कार्य केन्द्रीय बैंक का होता है। देश में मुद्रा की कुल मात्रा और उसका चलन वेग प्रत्यक्ष रूप से मुद्रा स्फीति और मुद्रा संकुचन को प्रभावित करता है। आर्थिक विकास के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय बैंक अर्थव्यवस्था में मुद्रा की मात्रा को नियंत्रित करता हैं। साख का विस्तार या संकुचन करने के लिए केन्द्रीय बैंक मौद्रिक नीति का उपयोग करता है, जिसे हम आगे विस्तार से जानेंगे।

केन्द्रीय बैंक का प्रमुख कार्य साख नियंत्रण हैं। व्यापारिक बैंक की साख निर्माण क्षमता को नियंत्रित करना आवश्यक होता हैं। देश में कीमत स्तर को स्थिर करना अर्थात मुद्रा स्फीति एवं मुद्रा संकुचन जैसी अस्थिरता को दूर करना केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियंत्रण का प्रमुख उद्देश्य होता है। इसके अतिरिक्त विदेशी विनिमय दर को स्थिर करना, स्थिरतापूर्वक आर्थिक वृद्धि करना देश में व्यापार के अनुकूल साख की मात्रा उपलब्ध कराना आदि।

(i) *मात्रात्मक उपाय* **(Quantitative Methods) :–**

इन उपायों के अपनाने से प्रत्यक्ष रूप से कुल साख की मात्रा पर प्रभाव पड़ता है किन्तु साख किस उद्देश्य के लिए उपलब्ध कराई जा रही है, अप्रभावित रहती है। ये उपाय केवल साख की मात्रा पर विशेष ध्यान देते हैं न कि साख की दिशा पर, जब देश की अर्थव्यवस्था में मुद्रा की तरलता की मात्रा का आधिक्य अथवा कमी हो जाती है तो केन्द्रीय बैंक साख की मात्रा एवं लागत को नियंत्रित करने के लिए जिन उपायों को अपनाता है उन्हें मात्रात्मक या परिमाणात्मक उपाय कहा जाता है। साख नियंत्रण के लिए भारत जैसे विकासशील देश में अपनाये जाने वाले मात्रात्मक उपाय इस प्रकार हैं–

1. बैंक दर नीति :–

बैंक दर केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियंत्रण का सर्वाधिक प्रचलित उपाय है। इसका उपयोग कर केन्द्रीय बैंक अपने अधीनस्थ बैंकों की ऋण देने की क्षमता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। ''बैंक दर वह है, जिस दर पर केन्द्रीय बैंक अपने व्यापारिक बैंकों को ऋण उपलब्ध करवाता है।''

बैंक दर वह दर है जिस पर केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के विनिमय बिलों की पुनर्कटौती करता है भारत में यह कार्य भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किया जाता है। जब देश में साख की मात्रा कम करनी होती हैं तब केन्द्रीय बैंक 'बैंक दर' को बढ़ा देती है, जिससे व्यापारिक बैंक के लिए ऋण महंगे हो जाते हैं, उसकी साख देने की क्षमता घट जाती हैं। इसके विपरीत साख का विस्तार करने के लिए बैंक दर घटा दी जाती है जिससे

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

व्यापारिक बैंक सस्ते ऋण केन्द्रीय बैंक से प्राप्त कर लोगों के लिए अधिक साख (ऋण) उपलब्ध करवा पाते हैं।

2. खुले बाजार की क्रियाऐं :–

केन्द्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों को खरीदने व बेचने की क्रिया को खुले बाजार की क्रियाऐं कहा जाता है। अर्थव्यवस्था में साख का नियमन करने हेतु केन्द्रीय बैंक इस प्रकार की क्रियाओं का प्रयोग करते हैं। जब अर्थव्यवस्था में साख की मात्रा कम करनी होती है, तो केन्द्रीय बैंक अपने पास संचित प्रतिभूतियों को वाणिज्यिक बैंकों को बेचना शुरू कर देता है, जिससे उनके पास नकद कोषों में कमी आती हैं और साख की मात्रा घटती है। इसके विपरीत यदि केन्द्रीय बैंक सरकारी प्रतिभूतियों को खरीदना शुरू करती है तो बैंको के पास नकद कोषों में वृद्धि हो जाती है, जिससे बैंक अधिक ऋण स्वीकृत कर पाते हैं। इससे अर्थव्यवस्था में साख का विस्तार होता है।

3. नकद कोषानुपात **(CRR)** *व वैधानिक तरलतानुपात* **(SLR)** *में परिवर्तन :–*

केन्द्रीय बैंक साख नियंत्रण के लिये नकद कोषानुपात (CRR) व वैधानिक तरलतानुपात (SLR) दोनों उपकरणों का उपयोग करता है।

''व्यापारिक बैंकों द्वारा अपनी जमाओं का एक निश्चित अनुपात धनराशि के रूप में केन्द्रीय बैंक के पास रखना अनिवार्य होता है, जिसे वैधानिक तरलतानुपात (SLR) कहते हैं।

इसी प्रकार 'बैंकिंग विधान के अनुसार बैंकों को अपनी कुल सम्पति का एक निश्चित अनुपात अपने पास तरल या नकद रूप में रखना अनिवार्य होता है, जिसे नकद कोषानुपात (CRR) कहते हैं।

जब केन्द्रीय बैंक को साख का विस्तार करना होता है तो उक्त दोनों अनुपातों को कम कर दिया जाता है एवं इसके विपरीत जब साख का संकुचन या कमी करनी होती है तो उक्त अनुपातों में वृद्धि कर दी जाती है।

(ii) *गुणात्मक उपाय* **(Qualitative Measures)** *:–*

केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियंत्रण हेतु कुछ गुणात्मक उपाय भी अपनाये जाते हैं जिनका उद्देश्य अर्थव्यवस्था के विशिष्ट क्षेत्र में साख को सीमित करने का होता हैं। साख का प्रवाह अनुत्पादक से उत्पादक क्षेत्र की वरफ करने का प्रयास केन्द्रीय बैंक की चयनात्मक साख नियंत्रण रीतियों द्वारा किया जाता है। साख नियंत्रण के गुणात्मक उपाय इस प्रकार हैं–

1. चयनात्मक साख नियंत्रण :–

केन्द्रीय बैंक द्वारा विशिष्ट क्षेत्रों एवं विशिष्ट आवश्यकता वाले समूहों के लिये चयनात्मक साख के नियंत्रण के उपाय अपनाये जाते हैं, जो इस प्रकार हैं –

1. ऋण की सीमाओं में परिवर्तन करना।
2. विनिमय बिलो की ब्याज दरों/कटौती दरों में भिन्नता रखना
3. विशिष्ट क्षेत्रों में ऋणों की जाँच व नियंत्रण।
4. विलासिता पूर्ण वस्तुओं के ऋण की अलग से किस्त निर्धारण करना।

2. साख की राशनिंग :–

इसके अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक के द्वारा भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के लिए साख की राशनिंग (अधिकतम सीमा निर्धारण) कर दी जाती हैं। यह सीमा बैंक के अनुसार अलग – अलग निर्धारित की जा सकती है। साख की राशनिंग निम्न तरीकों से की जा सकती हैं–

- किसी बैंक के लिये बिलों को पुनः भुनाने की सुविधा को पूर्णतया समाप्त करना।
- सभी बैंकों के लिये बिलों को पुनः भुनाने की सुविधा को सीमित कर देना।
- बैंकों द्वारा विभिन्न उद्योगों अथवा व्यवसायों को दिये जाने वाले ऋण की सीमा अथवा कोटा निश्चित कर देना।

उपरोक्त सभी उपायों के अतिरिक्त भी केन्द्रीय बैंक अन्य उपायों के माध्यम से साख का नियमन एवं नियंत्रण करता है, जो कि इस प्रकार हैं –

3. नैतिक दबाव :–

इसके अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों को सलाह व मार्ग दर्शन प्रदान करता है और इसी के द्वारा उनकी साख निर्माण नीति को नियमित करने का प्रयास करता है। केन्द्रीय बैंक अपने अधीनस्थ व्यापारिक बैंकों को सद्भाव व नैतिक अनुनय से भी अपनी साख नियंत्रित करने के लिए दबाव बना सकता हैं। अतः यह एक सहज एवं महत्वपूर्ण उपाय है।

4. प्रचार :–

बाजारीकरण के इस युग में विज्ञापनों का बड़ा महत्व है। प्रत्येक देश का केन्द्रीय बैंक इस हेतु अपनी–अपनी पत्र पत्रिकाएँ, जर्नल, बुलेटिन इत्यादि प्रकाशित करता है, जिसमें अर्थव्यवस्था से जुड़ी चुनौतियों, समसामयिक आर्थिक पहलुओं पर अपनी राय प्रस्तुत करता है और चुनौतियों से निपटने के उपाय भी सुझाता हैं। केन्द्रीय बैंक का यह उपाय भी साख नियंत्रण में सहायक सिद्ध होता है।

5. प्रत्यक्ष कार्यवाही :–

केन्द्रीय बैंक द्वारा उपरोक्त उपाय करने के पश्चात भी यदि बैंक इसकी नीति का पालन नहीं करते और बाजार विफलताएँ होती प्रतीत हों तो इसे ऐसे वैधानिक अधिकार प्राप्त हैं कि यह व्यापारिक बैंकों के खिलाफ प्रत्यक्ष कार्यवाही कर सकता है। ऐसी कठोर कार्यवाही के तहत दोषी बैंकों को पुनर्कटौती की सुविधा से वंचित कर सकता है। रिजर्व बैंक के द्वारा साख नियंत्रण के लिए किये उपायों में इसे सबसे कठोर कार्यवाही माना जाता हैं। अतः उक्त उपाय व्यवहार में कम ही प्रयोग में लिया जाता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि केन्द्रीय बैंक सफल साख नियंत्रण करने के लिए मात्रात्मक एवं चयनात्मक साख नियंत्रण उपायों का एकीकृत एवं उचित समायोजन करता हैं। जहाँ एक ओर मात्रात्मक उपाय प्रत्यक्ष रूप से साख की मात्रा को प्रभावित करते है वहीं चयनात्मक विधियाँ साख की दिशा को निर्धारित करती हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

भारतीय रिजर्व बैंक (Reserve Bank of India)

भारतीय रिजर्व बैंक भारत का केन्द्रीय बैंक है। भारत में बैंक के रूप में इसकी स्थापना 1 अप्रैल 1935 में हुई। प्रारम्भ में इसका केन्द्रीय कार्यालय कलकत्ता में स्थापित हुआ। तत्पश्चात 1937 में इसे मुंबई स्थानान्तरित कर दिया गया। तब तक यह निजी स्वामित्व में था। सन् 1949 में इसका पूर्ण रूप से राष्ट्रीयकरण कर दिया गया।

भारतीय रिजर्व बैंक का प्रबंधन एवं संचालन एक केन्द्रीय निदेशक बोर्ड द्वारा किया जाता है जिसका ढाँचा इस प्रकार है–

केन्द्रीय निदेशक बोर्ड

केन्द्रीय निदेशक बोर्ड

↓

गवर्नर

↓

उप गवर्नर

निदेशक

↓

कार्यपालक निदेशक

↓

प्रधान मुख्य महाप्रबन्धक

↓

प्रभारी मुख्य महाप्रबन्धक

↓

मुख्य महाप्रबन्धक

↓

महाप्रबन्धक

↓

उप महाप्रबन्धक

↓

सहायक महाप्रबन्धक

↓

प्रबन्धक

↓

सहायक प्रबन्धक

↓

सहायक स्टॉफ

भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के प्रावधानों के अनुसार हुई है।

उक्त अधिनियम के तहत् रिजर्व बैंक का कामकाज केन्द्रीय निदेशक बोर्ड द्वारा शासित होता हैं। भारत सरकार भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के अनुसार इस बोर्ड को नियुक्त करती है।

गठन :– बोर्ड में नियुक्ति/नामन चार वर्ष के लिये होता है।

सरकारी निदेशक :– पूर्णकालिक अवधि के लिये

:– एक गवर्नर और अधिकतम चार उप गवर्नर

गैर सरकारी निदेशक :– सरकार द्वारा नामित

:– विभिन्न क्षेत्रों से दस निदेशक और दो सरकारी अधिकारी

:– चार निदेशक, चार स्थानीय बोर्डों में से एक प्रत्येक से

रिजर्व बैंक के कार्य :–

भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा सम्पादित किये जाने वाले प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं –

मुद्रा जारीकर्ता :– अर्थव्यवस्था में आम जनता को अच्छी गुणवत्ता वाले करेंसी नोट व सिक्कों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से करेंसी जारी करता हैं। भारतीय रिजर्व बैंक भारत की करेंसी रुपया है जिसका संकेत ₹ है। परिचालन योग्य नहीं रहने पर करेंसी और सिक्कों को नष्ट भी करता हैं। भारत में एक रुपये का नोट सरकार द्वारा जारी किया जाता है, जिस पर वित्त सचिव के हस्ताक्षर होते हैं।

मौद्रिक प्राधिकारी :– देश की अर्थव्यवस्था के लिये मौद्रिक नीति तैयार करता है; उसका कार्यान्वयन और निगरानी भी करता है। मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य मूल्य स्थिरता बनाए रखना और उत्पादक क्षेत्रों को पर्याप्त ऋण उपलब्ध करवाना होता है।

वित्तीय प्रणाली का विनियामक :– बैंकिंग प्रणाली में लोगों का विश्वास बनाये रखना और जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करना रिजर्व बैंक का प्रमुख उद्देश्य होता है। इसके अतिरिक्त जनता को किफायती बैंकिंग सेवाएँ उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक बैंकिंग परिचालन के लिये विस्तृत मानदण्ड निर्धारित करता हैं, जिसके अन्तर्गत देश की बैंकिंग व वित्तीय प्रणाली कार्य करती है।

विदेशी मुद्रा प्रबंधक :– विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम 1919 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक विदेशी व्यापार और भुगतान को सुविधाजनक बनाने के लिए कार्य करता हैं। इसी के साथ भारत में विदेशी मुद्रा बाजार के क्रमिक विकास हेतु कार्य करता है।

विकासात्मक भूमिका :– राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए रिजर्व बैंक व्यापक स्तर पर प्रोत्साहनात्मक कार्य करता हैं। विभिन्न

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

क्षेत्रों के विकास हेतु मार्गदर्शन प्रदान करता है। रिजर्व बैंक वित्तीय संस्थाओं को इस प्रकार वित्तीय मजबूती प्रदान करता है।

संबंधित कार्य :– उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त रिजर्व बैंक अनेक अन्य कार्य भी सम्पादित करता है जो इस प्रकार हैं –

सरकार का बैंकर :– भारतीय रिजर्व बैंक केन्द्र और राज्य सरकारों के लिये व्यापारी बैंक की भूमिका अदा करता है उनके लिये एक बैंकर का कार्य भी करता है। वित्तीय संकट की स्थिति में रिजर्व बैंक भारत सरकार की आर्थिक सहायता भी करता है।

बैंकों का बैंकर :– भारतीय रिजर्व बैंक सभी अनुसूचित बैंकों के बैंक खातों को नियमित करता हैं। देश में मौद्रिक आधार परिवर्तित करने के लिए समाशोधन गृह की सुविधा प्रदान करता हैं। रिजर्व बैंक अधीनस्थ बैंकों के लिए अंतिम ऋणदाता के रूप में भी कार्य करता है।

सूचना प्रकाशित करना :– रिजर्व बैंक मुद्रा, साख तथा देश की आर्थिक स्थिति के बारे में विश्वसनीय जानकारी प्रकाशित करता हैं। रिजर्व बैंक के कुछ महत्वपूर्ण वार्षिक, अर्धवार्षिक, त्रैमासिक व मासिक अवधि में प्रकाशित होते हैं–

वार्षिक प्रकाशन :– भारत की बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति रिपोर्ट, करेंसी और वित्त पर रिपोर्ट, भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकी की हस्त पुस्तिका।

मासिक प्रकाशन :– भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन, मोनेटरी एण्ड क्रेडिट इन्फर्मेशन रिव्यू।

भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति :–
(Monetary Policy of Reserve Bank of India)

मौद्रिक नीति से अभिप्राय मुद्रा एवं साख की मात्रा पर नियमन एवं नियंत्रण करने की नीति से है। आधुनिक समय में देश की आर्थिक तरक्की में मुद्रा एवं साख का महत्वपूर्ण स्थान है। देश में मौद्रिक आवश्यकता के अनुरूप मुद्रा एवं साख की मात्रा में उचित प्रबंध एवं नियमन करने की आवश्यकता होती है। भारत में मौद्रिक एवं साख नीति रिजर्व बैंक अपने केन्द्रीय बोर्ड की सिफारिश के आधार पर जारी करता है। रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति के प्रमुख उपकरण निम्नलिखित हैं–

रेपो दर :– रेपो दर से अभिप्राय उस ब्याज दर से है, जो रिजर्व बैंक वाणिज्यिक बैंकों को अल्पकालिक दैनिक लेन–देन हेतु ऋणों पर वसूल करता है। केन्द्रीय बैंक बहुत कम अवधि के लिए ऐसे ऋण उपलब्ध करवाता है, यह ओवरनाईट कहलाता है। रिजर्व बैंक इस उपकरण का उपयोग करके बैंको की तरलता घटाने के लिए करता है, जिसके तहत रेपो दर बढ़ा देता है।

रिवर्स रेपो दर :– रिवर्स रेपो दर से अभिप्राय उस ब्याज दर से हैं, जो रिजर्व बैंक वाणिज्यिक बैंकों को उनकी अल्पकालिक जमाओं की एवज में अदा करता है। रिजर्व बैंक इस उपकरण का उपयोग करके बैंकों की तरलता सीमित करने के लिए करता है। रिवर्स रेपो बढ़ाने से बैंकों की जमाओं पर मिलने वाला ब्याज अधिक हो जाने से बैंक अपनी जमाएं बैंक में बढ़ा देते हैं।

नकद कोषानुपात (Cash Reserve Ratio):- रिजर्व बैंक सभी व्यापारिक बैंकों का शीर्षस्थ बैंक है। अतः सभी सदस्य बैंकों को अपनी नकद जमाओं का एक निश्चित अनुपात अपने पास रखना पड़ता है। इसे ही नकद कोषानुपात (CRR) कहते हैं। रिजर्व बैंक इसी कोषानुपात में वृद्धि करके सदस्य बैंकों के साख–सृजन की क्षमता को कम कर देता हैं। इससे देश में साख का संकुचन हो जाता है किन्तु जब यह नकद कोषानुपात में कमी कर देता हैं तो देश की अर्थव्यवस्था में साख का प्रसार हो जाता है।

वैधानिक तरलता अनुपात (SLR) :– भारतीय रिजर्व बैंक अपने अधीनस्थ बैंकों को अपनी कुल नकद जमाओं का एक निश्चित अनुपात जमा कोष के रूप रखने के लिए निर्देशित करता है, जिसे सांविधिक या वैधानिक तरलता अनुपात (SLR) कहते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक वैधानिक तरलता अनुपात को कम करके देश में बैंकों द्वारा साख का विस्तार कर सकता है तथा दूसरी तरफ देश में साख की मात्रा घटाने के लिए वैधानिक तरलता अनुपात को बढ़ा देता हैं। इस प्रकार वैधानिक तरलता अनुपात भी भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति का एक महत्वपूर्ण उपकरण हैं।

इस प्रकार रिजर्व बैंक ने 'मूल्य स्थिरता के साथ आर्थिक विकास' के लक्ष्य को बनाये रखने के लिए नियंत्रित साख विस्तार की नीति का पालन किया हैं।

केन्द्रीय बैंक तथा व्यापारिक बैंक में तुलना

देश की अर्थव्यवस्था में उसके केन्द्रीय बैंक तथा व्यापारिक बैंकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। तथापि केन्द्रीय बैंक तथा व्यापारिक बैंकों के उद्देश्य और कार्यों में भिन्नता पाई जाती है, फिर भी देश की मौद्रिक एवं बैकिंग व्यवस्था में दोनो संस्थाऐ अहम जिम्मेदारी निभाती हैं। केन्द्रीय बैंक तथा व्यापारिक बैंकों के उद्देश्य और कार्यों की तुलना हम निम्नानुसार कर सकते हैं–

1. व्यापारिक बैंको का प्रमुख उद्देश्य लाभ कमाना होता है जबकि केन्द्रीय बैंक का प्रमुख उद्देश्य मौद्रिक एवं बैकिंग व्यवस्था का नियमन एवं नियंत्रण करना होता है।
2. व्यापारिक बैंक अपनी व्युत्पन्न जमाओं के माध्यम से साख निर्माण करती हैं जबकि केन्द्रीय बैंक नोट निर्गमन के माध्यम से साख नियंत्रण करता हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

3. व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों को अल्पकालीन व दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती हैं जबकि केन्द्रीय बैंक सरकार व व्यापारिक बैंकों को अल्पकालीन व दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती हैं।

4. व्यापारिक बैंक अपने ग्राहकों से जमाएं स्वीकार करती है जबकि केन्द्रीय बैंक ग्राहकों से प्रत्यक्ष लेन–देन स्वीकार नहीं करता है।

5. व्यापारिक बैंक, केन्द्रीय बैंक द्वारा जारी मौद्रिक एवं साख नीति का अनुपालन करते हैं जबकि केन्द्रीय बैंक सरकार का सलाहकार तथा बैकों का बैंक होता है।

6. व्यापारिक बैंकों में ग्राहक अपनी इच्छानुसार राशि जमा करा सकता है जबकि व्यापारिक बैंकों को अपनी जमाओं का एक निश्चित अनुपात केन्द्रीय बैंक में जमा रखना अनिवार्य होता है।

इस प्रकार केन्द्रीय बैंक के दिशा निर्देशों का पालन करते हुए व्यापारिक बैंक देश की मौद्रिक एवं बैंकिग व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में सहयोग प्रदान करते है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- केन्द्रीय बैंक के दो प्रमुख कार्य– करेंसी का निर्गमन, बैंकों का बैंक एवं नियंत्रणकर्ता
- केन्द्रीय बैंक किसी भी देश की वह शीर्ष संस्था हैं जो मौद्रिक व बैंकिग क्षेत्र को नियंत्रित करने के लिए अधिकृत होती है।
- मात्रात्मक उपाय को अपनाने से प्रत्यक्ष रूप से कुल मुद्रा की पूर्ति एवं साख की मात्रा पर प्रभाव पड़ता हैं, किन्तु साख किस उद्देश्य के लिए उपलब्ध कराई जा रही है, अप्रभावित रहता है।
- साख नियंत्रण हेतु गुणात्मक उपाय भी अपनाये जाते हैं जिनका उद्देश्य अर्थव्यवस्था के विशिष्ट क्षेत्र में साख को सीमित करने का होता है।
- बैंक दर वह हैं, जिस दर पर केन्द्रीय बैंक अपने व्यापारिक बैंकों को ऋण उपलब्ध करवाता है।
- व्यापारिक बैंकों द्वारा अपनी जमाओं का एक निश्चित अनुपात धनराशि के रूप में केन्द्रीय बैंक के पास रखना अनिवार्य होता है, जिसे वैधानिक तरलता अनुपात कहते हैं।
- बैंकों को अपनी कुल सम्पति का एक निश्चित अनुपात अपने पास तरल या नकद रूप में रखना अनिवार्य होता है, जिसे नकद कोषानुपात कहते हैं।
- साख की राशनिंग के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक के द्वारा भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के लिए साख की राशनिंग (अधिकतम सीमा निर्धारण) कर दी जाती हैं। यह सीमा बैंक के अनुसार अलग–अलग निर्धारित की जा सकती है।
- प्रत्यक्ष कार्यवाही :– केन्द्रीय बैंक द्वारा उपरोक्त उपाय करने के पश्चात भी यदि बैंक इसकी नीति का पालन नहीं करते और बाजार विफलताएँ होती प्रतीत हों तो इसे ऐसे वैधानिक अधिकार प्राप्त हैं कि यह व्यापारिक बैंकों के खिलाफ प्रत्यक्ष कार्यवाही कर सकता हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

(1) बैंक दर से क्या तात्पर्य है –
(अ) जिस पर व्यापारिक बैंक उधार देते हैं।
(ब) जिस पर केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के बिलों की पुनर्कटौती करता है ।
(स) महाजनों द्वारा बैंकों को जिस दर पर उधार दिया जाता है।
(द) बैंक जनता को जिस दर पर उधार देता है।

(2) निम्नलिखित में से कौन सा साख नियन्त्रण का गुणात्मक उपाय नहीं है –
(अ) साख राशनिंग (ब) नैतिक दबाव
(स) खुले बाजार की क्रियाऐं (द) प्रत्यक्ष कार्यवाही

(3) केन्द्रीय बैंक का निम्न में से कौन सा प्रमुख कार्य है –
(अ) नोट निर्गमन करना
(ब) जनता से सीधा धन जमा करना
(स) जनता को ऋण देना
(द) उपर्युक्त सभी

(4) भारत का केन्द्रीय बैंक है –
(अं) भारतीय स्टेट बैंक (ब) भारतीय रिजर्व बैंक
(स) यूनियन बैंक (द) सिंडीकेट बैंक

(5) एक रुपये के नोट पर किसके हस्ताक्षर होते हैं–
(अ) गवर्नर (ब) प्रधानमंत्री
(स) वित्त सचिव (द) वित्त मंत्री

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1– केन्द्रीय बैंक की परिभाषा लिखिए।
2– बैंक दर से क्या अभिप्राय है?
3– साख की राशनिंग से आप क्या समझते हैं?
4– भारत के केन्द्रीय बैंक का नाम लिखिये।
5– भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी एक मासिक बुलेटिन का नाम लिखिये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1– केन्द्रीय बैंक के नोट निर्गमन के कार्य को समझाइये।
2– केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण के लिये अपनाये जाने वाले परिमाणात्मक उपाय लिखिये।
3– केन्द्रीय बैंक द्वारा की जाने वाली प्रत्यक्ष कार्यवाही को समझाइये।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4– भारतीय रिजर्व बैंक के केन्द्रीय निदेशक मण्डल को एक फ्लो चार्ट से समझाइये।

5– भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित कोई चार वार्षिक प्रकाशनों के नाम लिखिये।

निबंधात्मक प्रश्न :–

1– केन्द्रीय बैंक की परिभाषा दीजिए तथा उसके प्रमुख कार्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

2– केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण के लिये अपनाये जाने वाले उपायों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

3– भारतीय रिजर्व बैंक के मौद्रिक उपकरणों को विस्तार से समझाइये।

4– केन्द्रीय बैंक तथा व्यापारिक बैंक में कार्यों के आधार पर तुलना कीजिए।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
ब	स	अ	ब	स

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय – 20

उपभोग फलन, बचत फलन व निवेश फलन की अवधारणा
(Concept of Consumption function, Saving function & Investment function)

परिचय

क्लासिकल अर्थशास्त्रियों का यह मानना था कि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार पाया जाता है। 'से के बाजार के नियम' भी इसी मान्यता पर आधारित था। इनके अनुसार अगर अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की स्थिति है और अगर अर्थव्यवस्था में मुक्त (Free) व पूर्ण प्रतिस्पर्धा की स्थिति है तो बाजार में कुछ शक्तियां ऐसे काम करेंगी जिससे पुनः पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त होगी।

लेकिन 1929–33 के बीच ग्रेट ब्रिटेन, अमेरिका व अन्य देशों में आर्थिक मंदी की स्थिति आयी, जिसके कारण बेरोजगारी बढ़ी व राष्ट्रीय आय भी कम हुई। इसके कारण कई कारखाने बंद हुए और कई उद्योगों में उत्पादन की क्षमता से कम उत्पादन पर काम होने लगा। बहुत बड़े पैमाने पर बेरोजगारी बढ़ने के कारण लोगों को अत्यन्त आर्थिक कठिनाई से गुजरना पड़ा और इस समस्या का उस समय प्रचलित आर्थिक सिद्धान्तों द्वारा कोई सामाधान भी नहीं निकल रहा था।

इसी सन्दर्भ में 1936 में J.M.Keynes (जे.एम.कीन्स) ने अपनी पुस्तक 'The general Theory of employment, interest and money' में रोजगार के क्लासिकल सिद्धान्त का खंडन किया तथा आय व रोजगार के नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जो कि उस समय की आर्थिक समस्याओं के निदान में सहायक रहा। कीन्स ने अपनी पुस्तक में रोजगार को प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में बताया तथा उन कारकों को भी बताया जिससे अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है। कीन्स ने बताया पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओ में पूर्ण रोजगार की स्थिति नहीं पायी जाती है और अर्थव्यवस्था में सामान्यतया अपूर्ण रोजगार (Under employment equilibrium) साम्य की स्थिति होती है।

कीन्स का आय एवं रोजगार का सिद्धान्त एक अल्पकालीन सिद्धान्त है। कीन्स के अनुसार जनसंख्या, पूंजी, श्रम, शक्ति, तकनीक, मजदूरों की कार्यकुशलता एक समय में बदलती नहीं है। उनके अनुसार आय और उत्पाद में वृद्धि ज्यादा श्रमशक्ति को लगाकर प्राप्त की जा सकती है।

अतः अल्पकाल में अगर राष्ट्रीय आय अधिक होती है तो रोजगार भी अधिक होगा और अगर राष्ट्रीय आय कम होगी तो रोजगार की मात्रा भी कम होगी। कीन्स के आय उत्पादन निर्धारण सिद्वांत को समझने से पहले निम्न निर्धारक फलनों का अध्ययन आवश्यक होगा।

उपभोग फलन

उपभोग फलन कीन्स के अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। इसको कीन्स का मूलभूत मनोवैज्ञानिक नियम (Fundamental Pschological law) भी कहा जाता है। इस नियम के अनुसार आय के बढ़ने पर उपभोग बढ़ता है लेकिन उस अनुपात में नहीं बढ़ता है जिस अनुपात में आय बढ़ती है अतः बढ़ी हुई आय का कुछ भाग उपभोग बढ़ाने में जाएगा और कुछ भाग बचत बढ़ाने में जाएगा।

कीन्स के अनुसार उपभोग पर प्रमुख रुप से आय का प्रभाव पड़ता है। आय के बढ़ने पर उपभोग बढ़ता है और आय के घटने पर उपभोग घटता है। उपभोग, प्रयोज्य आय पर निर्भर करता है। आय में से कर को घटाने के बाद खर्च योग्य आय प्राप्त होती है जो उपभोग व बचत (C+S) के बराबर होती है एक उपभोग फलन को गणितीय भाषा में निम्न प्रकार से दर्शाते हैं

$$C = f(Y_d)$$

यहां C - उपभोग

Y_d - प्रयोज्य आय

अगर उपभोग फलन एक सरल रेखा है तब

$$C = a + b Y_d$$

यहां पर a - स्वायत्त उपभोग

b - सीमान्त उपभोग की प्रवृत्ति (उपभोग फलन का ढाल) अथवा

$$b = \frac{\Delta C}{\Delta Y_d}$$

कुल प्रयोज्य आय में परिवर्तन के फलस्वरुप जो उपभोग में परिवर्तन होता है वह सीमान्त उपभोग की प्रवृत्ति कहलाती है।

चित्र 20.2 (अ) एक रेखीय उपभोग फलन दिखाया गया है यह बताता है कि उपभोग व्यय, व्यक्ति की प्रयोज्य आय के साथ बदलता है। इस चित्र में आय उपभोग सम्बन्ध दिखलाया गया है जबकि दूसरे चर जैसे धन, पूर्ववर्ती आय, (आय का वितरण), कर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

की दर आदि को स्थिर रखा गया है।

चित्र में सरल रेखा C = a+b Yd एक रेखीय उपभोग फलन है। चित्र में 45° का कोण बनाते हुए समता रेखा (समग्र पूर्ति रेखा) भी बनायी गयी हैं जो यह बताती है कि कुल आय, उपभोग व्यय (C) तथा बचत के बराबर होती है। Y = C+I

उपभोग फलन यह बताता है कि आय का स्तर शून्य के बराबर होने पर भी एक व्यक्ति कुछ न कुछ उपभोग करता है चित्र में यह 100 इकाई के बराबर है। यह स्वायत्त उपभोग कहलाता है। अतः आय के शून्य स्तर पर अबचत होती है। इसे स्थिर उपभोग चर द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है।

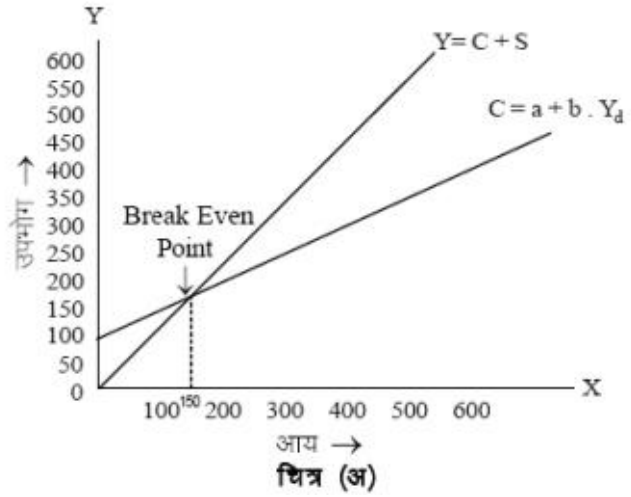

चित्र (अ)

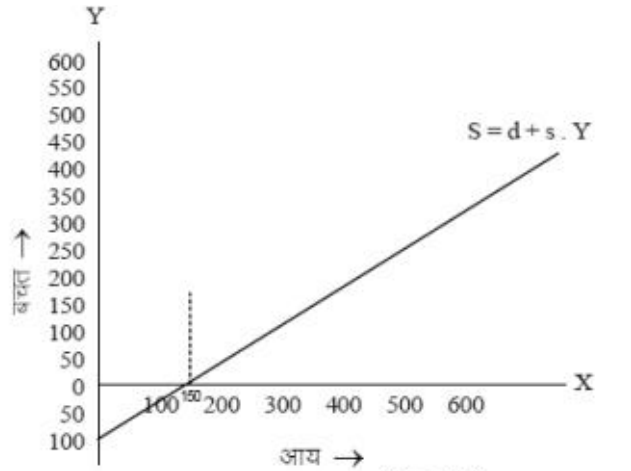

चित्र (ब)

रेखाचित्र 20.2

चित्र में जब आय का स्तर 150 है उस समय बचत शून्य के बराबर है। इस आय के स्तर पर व्यक्ति न तो बचत करता है न ही अबचत करता है। यह आय का Breakeven स्तर कहलाता है। Breakeven बिन्दु के पूर्व समाज अबचत करता है क्योंकि समाज का आय का स्तर उपभोग स्तर से कम है।

Breakeven level of income से आगे समाज बचत करता है क्योंकि उपभोग का स्तर आय के स्तर से कम है।

उपभोग की औसत प्रवृत्ति (Average Propensity to consume)

उपभोग की औसत प्रवृत्ति कुल आय व कुल उपभोग के बीच संबंध बताती है।

यह आय के किसी विशेष स्तर से उपभोग व्यय का अनुपात होता है।

उपभोग की औसत प्रवृत्ति (APC)

$$APC = \frac{C}{Y} = \frac{\text{कुल उपभोग}}{\text{कुल आय}}$$

कुल उपभोग में आय का भाग देने से APC प्राप्त होती है।

आय के विभिन्न स्तर पर उपभोग की औसत प्रवृत्ति बदलती रहती है।

उपभोग की औसत प्रवृत्ति को ज्ञात करने के लिए एक तालिका के माध्यम से इसे समझाया जा रहा है। तालिका से ज्ञात होता है कि आय के विभिन्न स्तरों पर उपभोग की औसत प्रवृत्ति का मान बदलता रहता है। जैसे जैसे आय बढ़ती है, त्यों त्यों APC घटती जाती है क्योंकि उपभोग पर व्यय की गई आय का अनुपात होता जाता है।

तालिका 20.1

आय	उपभोग	APC	MPC
0	100	$\frac{100}{0} = \infty$	-
100	150	$\frac{150}{100} = 1.5$	$\frac{50}{100} = 0.5$
200	200	$\frac{200}{200} = 1.0$	$\frac{50}{100} = 0.5$
300	250	$\frac{250}{300} = 0.83$	$\frac{50}{100} = 0.5$
400	300	$\frac{300}{400} = 0.75$	$\frac{50}{100} = 0.5$
500	350	$\frac{350}{500} = 0.7$	$\frac{50}{100} = 0.5$

उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति (Margical Propensity to Consume)

उपभोग की वृद्धि में आय की वृद्धि का भाग दिया जाता है तो उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति ज्ञात होती है।

$$MPC = \frac{\Delta C}{\Delta Y} = \frac{\text{उपभोग में परिवर्तन}}{\text{आय में परिवर्तन}}$$

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अर्थात उपभोग में परिवर्तन का आय में परिवर्तन के अनुपात को उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति कहते हैं।उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति उपभोग की उस वृद्धि को दर्शाती है जो आय में एक इकाई की वृद्धि से प्राप्त होती है। यह शून्य से अधिक व एक से कम होती हैं।

$$O < MPC < 1$$

यदि $MPC = 0.7$

इसका तात्पर्य है कि आय में एक रुपया बढ़ने से उपभोग में 70 पैसे की वृद्धि होगी। उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति उपभोग फलन के ढ़ाल को दर्शाती है।

उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति को ज्ञात करने के लिए तालिका 20.1 से समझाया जा सकता है।

तालिका से ज्ञात होता है कि एक सरल रेखीय उपभोग फलन में आय के विभिन्न स्तर पर उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति समान रहती है। अर्थात एक सरल रेखीय उपभोग फलन के प्रत्येक बिन्दु पर उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति स्थिर रहती है (चित्र 20.3 अ)। कीन्स के अनुसार, अल्पकाल में MPC स्थिर रहती है। इस अवस्था में APC > MPC होती है। अनेक अर्थशास्त्रियों के अनुसार दीर्घकाल में APC तथा MPC दोनों ही बराबर रहते है। उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति सरल रेखीय उपभोग फलन के ढ़ाल के बराबर होती है।

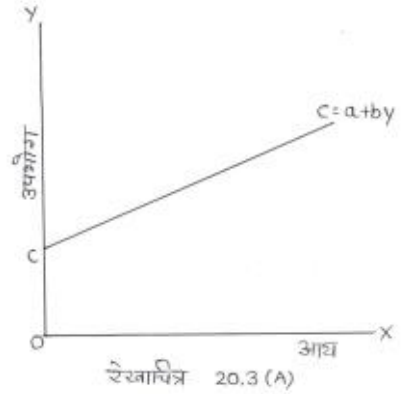

रेखाचित्र 20.3 (A)

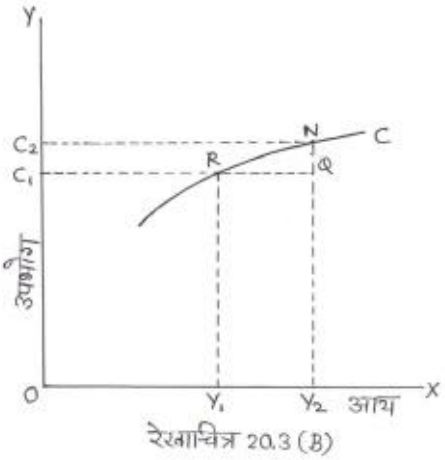

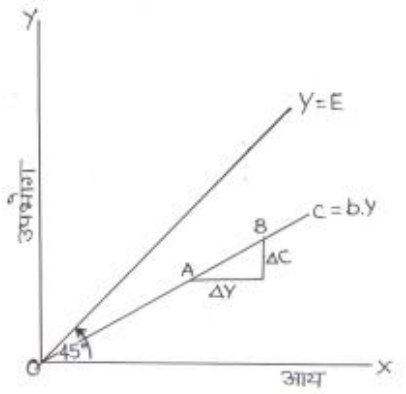

रेखाचित्र 20.3 (B)

चित्र 20.3 B में $\frac{NQ}{RQ}$ द्वारा उपभोग वक्र के ढाल को दर्शाया गया है जहां NQ उपभोग में परिवर्तन (ΔC) और RQ आय में परिवर्तन (ΔY) है अथवा $\frac{C_1C_2}{Y_1Y_2}$ है। इसी चित्र में औसत उपभोग प्रवृत्ति R बिन्दु पर $\frac{OC_1}{OY_1}$ है और N बिन्दु पर $\frac{OC_2}{OY_2}$ है। C वक्र दायीं ओर अधिक चपटा हो जाता है, जो घटती औसत उपभोग प्रवृत्ति को दर्शाता है।

रेखाचित्र 20.4 रैखिक उपभोग फलन OC=bY दोनों अक्षों के मूल बिन्दु O से प्रारंभ होता है। यहां पर दीर्घकाल में APC और MPC दोनों बराबर होते है। यह दीर्घकालीन उपभोग फलन कहलाता है।

***बचत फलन* Saving function**

बचत को ज्ञात करने के लिए कुल आय में से उपभोग व्यय को घटाया जाता है।

चूंकि $Y = C + S$

इसलिए $S = Y - C$

पूर्व में हमने उपभोग फलन के साथ ही बचत फलन को ग्राफ में दिखलाया है। बचत फलन को ज्ञात करने के लिए 45° की समता रेखा में से आय के विभिन्न स्तर पर उपभोग को घटा दिया जाए तो हमें बचत फलन ज्ञात होता है। चित्र (20.2 ब) में बचत फलन दर्शाया गया है।

$$Y = C + S \quad ...(1)$$

और $$C = a + bY \quad ...(2)$$

(2) का मान (1) में रखने पर

$$Y = a + bY + s$$

$$-a + (1 - b)Y = s$$

अतः बचत फलन का गणितीय रूप है

$$s = -a + (1 - b)Y$$

***बचत की औसत प्रवृत्ति* (Average propensity to save)**

कुल आय व कुल बचत के बीच संबंध बताती है।

बचत की औसत प्रवृत्ति (APS)

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

$$APS = \frac{S}{Y} = \frac{\text{कुल बचत}}{\text{कुल आय}}$$

कुल बचत में कुल आय का भाग देने पर बचत की औसत प्रवृत्ति प्राप्त होती है। बचत की औसत प्रवृत्ति को दर्शाया गया हैं।

तालिका 20.2

आय	उपभोग	बचत	APS
0	100	0	-
100	150	- 50	$\frac{-50}{100} = -0.5$
200	200	0	$\frac{0}{200} = 0$
300	250	50	$\frac{50}{300} = 0.16$
400	300	100	$\frac{100}{400} = 0.25$
500	350	150	$\frac{150}{500} = 0.3$

हम जानते हैं

$$Y = C + S$$

पूरा समीकरण में Y का भाग देने पर

$$\frac{Y}{Y} = \frac{C}{Y} + \frac{S}{Y}$$

$$1 = APC + APS$$

$$APS = 1 - APC$$

APS का मान निकालने के लिए 1 में से APC को घटाया जाता है।

बचत की सीमान्त प्रवृत्ति (Marginal Propensity it Save)

जब बचत की वृद्धि में आय की वृद्धि का भाग दिया जाता है तो बचत की सीमान्त प्रवृत्ति ज्ञात होती है।

$$MPS = \frac{\Delta S}{\Delta Y} = \frac{\text{बचत में परिवर्तन}}{\text{आय में परिवर्तन}}$$

अर्थात बचत में परिवर्तन का आय में परिवर्तन के अनुपात को बचत की सीमान्त प्रवृत्ति कहते है।

हम जानते हैं।

$$Y = C + S$$

इसलिए $\Delta Y = \Delta C + \Delta S$

ΔY से भाग देने पर

$$\frac{\Delta Y}{\Delta Y} = \frac{\Delta C}{\Delta Y} + \frac{\Delta S}{\Delta Y}$$

$$1 = MPC + MPS$$

इसलिए $MPS = 1 - MPC$

MPS को निकालने के लिए एक में से MPC को घटाया जाता है।

बचत की सीमान्त प्रवृत्ति ज्ञात करने के लिए निम्न तालिका का प्रयोग करते हैं।

तालिका 20.3

आय	उपभोग	बचत	MPS
0	100	0	-
100	150	- 50	$\frac{-50}{100} = -0.5$
200	200	0	$\frac{50}{100} = 0.5$
300	250	50	$\frac{50}{100} = 0.5$
400	300	100	$\frac{50}{100} = 0.5$
500	350	150	$\frac{50}{100} = 0.5$

निवेश फलन –

निवेश शब्द से अर्थशास्त्र में तात्पर्य है नये उत्पादक परिसम्पति (New Productive Assets) को प्राप्त करना और इस नयी उत्पादक परिसम्पति से वस्तुएं और सेवाएं उत्पादित करना। साधारण भाषा में लोगों के द्वारा निवेश शब्द का प्रयोग किया जाता है जब कोई व्यक्ति जमीन में या कम्पनी के शेयर खरीदने में पैसे लगाता है। जबकि अर्थशास्त्र में निवेश से तात्पर्य है नये उत्पादक परिसम्पतियों को प्राप्त करते से है और इसका वस्तुओं और सेवाओं को उत्पादित करने में प्रयोग करना। अगर इन उत्पादक परिसम्पतियों को प्राप्त किया जाता है लेकिन इससे वस्तुएं और सेवाएं उत्पादित नहीं की जाती है तो यह सिर्फ पूंजी निर्माण ही कहलाएगा। और जैसे ही इन परिसम्पतियों का वस्तु और सेवाओं को उत्पादित करने में प्रयोग होता है वैसे ही पूंजी निर्माण, निवेश में बदल जाता है।

किसी अर्थव्यवस्था में निवेश निम्न प्रकार का हो सकता है।

(i) सार्वजनिक निवेश – यह निवेश सरकार व स्थानीय निकायों द्वारा किया गया निवेश है। सरकार द्वारा आधारभूत संरचना को खड़ा करने में किया गया निवेश सार्वजनिक निवेश कहलाता है जैसे रोड़, पुल, बांध, सड़कें आदि।

(ii) निजी निवेश – अगर निवेश निजी निवेशकों द्वारा नयी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

फैक्ट्री, बिल्डिंग, उपकरण आदि में किया जाता है तो यह निजी निवेश कहलाता है।

(iii) स्वायत्त निवेश – यह वह निवेश है जो उत्पत्ति आय, ब्याज दर तथा लाभ में परिवर्तन पर निर्भर नहीं करता है स्वायत्त निवेश को X अक्ष के सामान्तर सरल रेखा खींचकर बताया जाता है। इस तरह का निवेश सरकारों द्वारा सामान्यतया किया जाता है जैसे जनउपयोगी कार्यों पर किया गया खर्च, जैसे– सड़क, बांध, नहर इत्यादि पर किया गया व्यय इस प्रकार के निवेश में शामिल होता है।

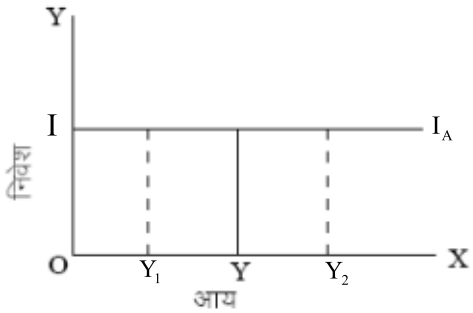

रेखाचित्र 20.5

रेखाचित्र 20.5 में स्वायत्त निवेश को क्षैतिज अक्ष के समान्तर वक्र $I I_a$ के रुप में दिखाया गया है। यह प्रकट करता है कि आय के सभी स्तरों OY, OY_2 और OY निवेश की मात्रा IO स्थिर रहती है। इस प्रकार स्वायत्त निवेश आय बेलोच होता है। इसे बहिजति घटक जैसे जनसंख्या, अनुसंधान नवप्रवर्तन आदि प्रभावित करते है।

(iv) *प्रेरित निवेश –*

जब निवेश लाभ या आय अर्जित करने के लिए किया जाता है तो इस प्रकार के निवेश को प्रेरित निवेश कहा जाता है। यदि आय बढ़ती है तो निवेश भी बढ़ता है। प्रेरित निवेश आय लोच होता है।

प्रेरित निवेश का वक्र आय के साथ उपर की ओर जाता हुआ वक्र है। जब आय बढ़ती है तो उपभोग की मांग भी बढ़ती है और इसको पूरा करने के लिए निवेश बढ़ाया जाता है। लाभ हेतु किया गया प्रेरित निवेश कीमतों, मजदूरी और ब्याज दर से प्रभावित होता है।

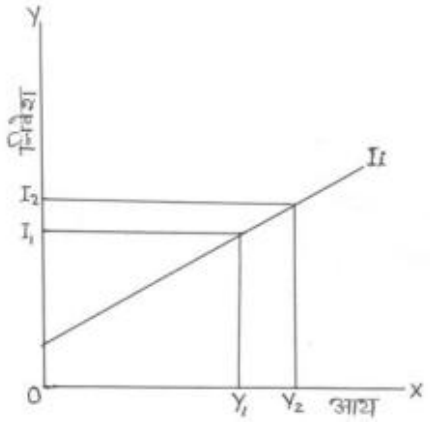

रेखाचित्र 20.6

रेखाचित्र 20.6 में जब आय का स्तर Y_1 है उस समय निवेश का स्तर I, है और जब आय का स्तर Y_2 है उस समय निवेश का स्तर I_2 है।

बचत व निवेश के बारे में दो पहलू हैं

(a) प्रत्याशित बचत व प्रत्याशित निवेश Ex-ante Saving and Ex-ante investment किसी एक विशेष साल में जो लोग बचत करते हैं उसे प्रत्याशित बचत कहते हैं।

इसी तरह जब उद्यमकर्त्ता को अपनी वस्तु की बिक्री बढ़ने या वस्तुओं और सेवाओं की कीमत बढ़ने की आशा होती है तो वे अपने वस्तुओं के भंडार को बढ़ाते हैं जिसे प्रत्याशित निवेश कहते हैं।

जैसा कि हम जानते हैं कि बचतकर्ता और निवेशकर्ता दो अलग – अलग समूह होते हैं और दोनों अलग – अलग उद्देश्यों से प्रेरित होते हैं अतः प्रत्याशित बचत व प्रत्याशित निवेश एक दूसरे के बराबर नहीं होते हैं।

अतः एक पूंजीगत अर्थव्यवस्था में प्रत्याशित बचत व प्रत्याशित निवेश में अन्तर ही आय के स्तर, उत्पाद के स्तर तथा रोजगार के स्तर में उतार चढ़ाव लाते हैं।

इसमें दो स्थिति हो सकती है –

(1) जब प्रत्याशित निवेश, प्रत्याशित बचत से अधिक होता है।

माना उद्यमकर्ता 50000 करोड़ रु. का निवेश करना चाहते हैं जबकि पारिवारिक इकाई 45000 करोड़ रु. की प्रत्याशित बचत करते हैं ऐसी स्थिति में समग्र मांग समग्र पूर्ति से ज्यादा होती है। इस मांग को पूरा करने के लिए उद्यमकर्ता अतिरेक मांग, ज्यादा साधन को लगाकर अपने उत्पाद को बढ़ायेगें। इससे राष्ट्रीय आय बढ़ेगी और बचत व निवेश पुनः बराबर होकर साम्य की स्थिति प्राप्त होगी।

(2) जब प्रत्याशित निवेश, प्रत्याशित बचत से कम होता है।

माना उद्यमकर्ता 45000 करोड़ रु. का निवेश पसंद करते है

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जबकि पारिवारिक इकाईयां 50000 करोड़ रु. की प्रत्याशित बचत करते हैं। ऐसी स्थिति में समग्र पूर्ति, समग्र मांग से ज्यादा होती है। ऐसी स्थिति में उद्यमकर्ता के पास बिना बिक्री हुई वस्तुओं का स्टॉक इकट्ठा हो जाएगा। अतः उद्यमकर्ता रोजगार के स्तर को घटांएगे और कम उत्पादित करेगें और अंत में आय का स्तर भी घटेगा। इसके कारण बचत भी घटेगी और अंत में निवेश के पुनः बराबर होगी।

(b) पूर्वव्यापी बचतें व संपादित विनियोग (Expost Saving and Expost investment)

संपादित बचतें (Expost Savings) वे बचतें हैं जो पारिवारिक इकाई आय में से वास्तव में बचाते हैं।

संपादित निवेश (Expost Investments) :- ये वे निवेश है जो एक साल में उद्यमकर्ताओं द्वारा वास्तव में किये जाते हैं। आय के सभी स्तरों पर संपादित बचतें, संपादित विनियोग के बराबर होती है।

पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता **(Marginal efficiency of Capital)** – एक पूंजीगत अर्थव्यवस्था में निवेश हमेशा लाभ के उद्देश्य से प्रेरित होता है। अतः निवेश दो बातों पर निर्भर करता है–

(1) पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता Marginal efficiency of Capital (MEC)

(2) ब्याज दरों पर (Rate of Interst)

पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता बट्टे की वह दर है जो पूर्ति कीमत (Supply Price) या (परियोजना की लागत) को परियोजना से होने वाले भविष्य के प्रतिफल के बराबर करती है। प्रो. कुरिहारा के अनुसार 'यह अतिरिक्त पूंजीगत वस्तुओं की भावी आय और उनकी पूर्ति कीमत के बीच अनुपात है।' पूंजी की सीमान्त उत्पादकता, पूंजी निवेश से अनुमानित लाभ की दर होती है। यह दो तत्वों द्वारा प्रभावित होती है– प्रत्याशित आय और पूर्ति कीमत। प्रत्याशित लाभ अर्थात् निवेश करते समय ध्यान में रखा जाता हैं कि भविष्य में कितने प्रतिफल प्राप्त होगें। इसी प्रकार पूंजीगत वस्तुओं पर किया गया व्यय लागत अथवा पूर्ति कीमत कहलाता है।

$$C = \frac{R_1}{1+r} + \frac{R_2}{(1+r)^2} + ... + \frac{R_n}{(1+r)^n}$$

यहां पर C = परियोजना की लागत (पूर्ति कीमत)

r = बट्टे की दर

$R_1, R_2 .... R_n$ = वार्षिक भविष्य के प्रतिफल पूंजीगत सम्पत्ति से

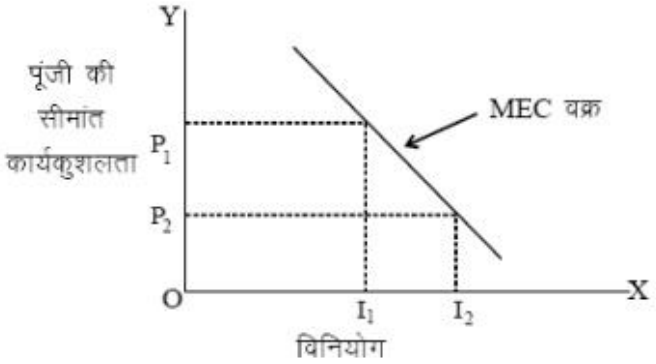

रेखाचित्र 20.7

उपरोक्त रेखाचित्र 20.7 MEC वक्र को दर्शाता है। X अक्ष पर विनियोग की मात्रा और Y अक्ष पर पूंजी की सीमान्त उत्पादकता को दर्शाया गया है, जब विनियोग OI_1 से बढ़कर OI_2 होता है तो पूंजी की सीमान्त उत्पादकता घटकर OP_1 से OP_2 हो जाती है। पूंजी सीमान्त उत्पादकता विनियोग में वृद्धि के साथ–साथ घटती जाती है। इसके दो कारण है 1. अधिक उत्पादन हेतु जैसे–जैसे पूंजी का उपयोग बढ़ता है वैसे–वैसे प्रत्याशित लाभ की मात्रा घटती जाती है क्योंकि अधिक उत्पादन से उत्पादित वस्तु की कीमतें क्रमशः घटने लगती है। 2. पूंजी की मांग बढ़ने पर उसकी पूर्ति कीमत में वृद्धि होने से उसकी उत्पादन लागत में भी वृद्धि हो जाती है। इस प्रकार जैसे–जैसे निवेश बढ़ता है। पूंजी की सीमांत कार्यकुशलता (MEC) दाहिने हाथ की तरफ झुकती है।

एक निवेशक, निवेश सम्बन्धी निर्णय करने के लिए पूंजी की सीमांत कार्यकुशलता (MEC) की ब्याज दर से तुलना करता है। जब तक पूंजी की सीमांत कार्यकुशलता ब्याज दर से ज्यादा होगी तब तक निवेश किया जाता रहेगा। विनियोग का साम्य स्तर वहां निर्धारित होता है जहां पूंजी की सीमान्त उत्पादकता ब्याज की वर्तमान दर के बराबर हो जाती है।

मुख्य बिन्दु :–

- कीन्स का उपभोग के संदर्भ में मनोवैज्ञानिक नियम – इस नियम के अनुसार एक व्यक्ति की आय के बढ़ने पर वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग बढ़ता है लेकिन उतना नहीं जितनी उसकी आय बढ़ी है। अतः बढ़ी हुई आय का कुछ हिस्सा उपभोग बढ़ाने में जाएगा और कुछ हिस्सा बचत बढ़ाने में जाएगा।
- एक उपभोग फलन को गणितीय रुप में निम्न प्रकार से दर्शाते हैं।

$$C = f(Y_d)$$

or $C = a + b Y_d$ (सरल रेखीय उपभोग फलन)

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

यहां पर a = स्वायत्त उपभोग
b = सीमान्त उपभोग की प्रवृत्ति
c = उपभोग व्यय
Y_d = प्रयोज्य आय

- उपभोग की औसत प्रवृत्ति, कुल उपभोग में कुल आय का भाग देने से प्राप्त होती है।

$$APC = \frac{C}{Y}$$

उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति :– जब उपभोग की वृद्धि में आय की वृद्धि का भाग दिया जाता है तो उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति प्राप्त होती है।

$$MPC = \frac{\Delta C}{\Delta Y}$$

यहां पर MPC - उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति
ΔC – उपभोग में वृद्धि / परिवर्तन
ΔY – आय में वृद्धि / परिवर्तन
MPC का मान 0 से 1 के बीच में होता है।

- बचत फलन :– बचत फलन, बचत व आय के बीच फलनात्मक सम्बंध को बताता है।
$S = f(Y_d)$
or $S = -a + (1-b)Y$
- बचत की औसत प्रवृत्ति (APS) Average prospensity to save
कुल बचत में कुल आय का भाग देने से प्राप्त होती है।
$APC + APS = 1$
- बचत की सीमान्त प्रवृत्ति :– जब बचत की वृद्धि में आय की वृद्धि का भाग दिया जाता है तो MPS या बचत की सीमान्त प्रवृत्ति प्राप्त होती है।

$$MPS = \frac{\Delta S}{\Delta Y}$$

$MPC + MPS = 1$

- निवेश से तात्पर्य नयी उत्पादक परिसम्पत्ति को खरीदना और उसका वस्तुओं और सेवाओं में उपयोग निवेश कहलाता है।
- सार्वजनिक निवेश – सरकारों द्वारा किया गया निवेश सार्वजनिक निवेश कहलाता है
- निजी निवेश – यदि निवेश निजी निवेशकर्ता द्वारा नयी फैक्ट्री, बिल्डिंग, औजारों (equiment) आदि पर किया जाता है तो निजी निवेश कहलाता है।
- स्वायत्त निवेश – यह वह निवेश होता है जो उत्पत्ति, आय, ब्याज दर तथा लाभ आदि पर निर्भर नहीं करता है।
- प्रेरित निवेश :– जब निवेश लाभ या आय अर्जित करने के लिए किया जाता है तो इस प्रकार के निवेश को प्रेरित निवेश कहा जाता है।
- पूँजी की सीमान्त कार्यकुशलता :– नये निवेश पर लाभ की प्रत्याशा (expected rate of profitability) को पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता कहते है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1 उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति का क्या सूत्र है।

(अ) $\frac{\Delta S}{\Delta Y}$ (ब) $\frac{C}{Y}$
(स) $\frac{\Delta C}{\Delta Y}$ (द) शून्य

2 MPC का अधिकतम मूल्य होगा
(अ) शून्य (ब) एक
(स) अनन्त (द) इनमें से कोई नहीं।

3 यदि APC = APS है तो APC तथा APS का मान अलग–अलग क्या होगा।
(अ) शून्य (ब) 1
(स) 0.5 (द) 0.7

4 MPC तथा MPS का जोड़ कितने के बराबर होता है।
(अ) शून्य (ब) अनन्त
(स) इनमें से कोई नहीं (द) एक

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति से आप क्या समझते है?
2. उपभोग फलन किसे कहते है?
3. यदि MPC = 0.5 तो MPS का क्या मान होगा?
4. निवेश फलन किसे कहते हैं?
5. बचत की औसत प्रवृत्ति किसे कहते हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. उपभोग की औसत प्रवृत्ति से आप क्या समझते हैं इसे किस प्रकार मापा जा सकता है।
2. निवेश से आप क्या समझते हैं।
3. स्वायत्त निवेश तथा प्रेरित निवेश में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. बचत की सीमान्त प्रवृत्ति एवं उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति से आप क्या समझते हैं।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. बचत फलन को सारणी एवं चित्र तथा गणितीय सूत्र के द्वारा समझाइए।
2. पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता को विस्तार से समझाइये।
3. उपभोग फलन को सारणी, चित्र व गणितीय सूत्र के द्वारा समझाइये।

उत्तर तालिका

1	2	3	4
स	ब	स	द

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय – 21

आय– उत्पादन का निर्धारण
(Income - Output Dertermination)

हमने पूर्ववर्ती अध्याय में उपभोग फलन, बचत फलन व निवेश फलन की अवधारणा का अध्ययन किया है। इस अध्याय में हम समग्र मांग व समग्र पूर्ति वक्रों की सहायता से आय एवं उत्पादन के संतुलन स्तर का निर्धारण करेंगे।

समग्र मांग :–

एक दिए हुए आय व रोजगार के स्तर पर एक साल में अर्थव्यवस्था में जो वस्तुओं और सेवाओं की मांग की जाती है उसे समग्र मांग कहते है।

समग्र मांग एक अर्थव्यवस्था मे समग्र खर्चे के बराबर होती है। एक खुली अर्थव्यवस्था में समग्र मांग के चार हिस्से होते हैं।

1. उपभोग खर्च (C)
2. विनियोग खर्च (I)
3. सरकारी खर्च (G)
4. शुद्ध निर्यात (X-M)

$AD = C + I + G + (X-M)$ (खुली अर्थव्यवस्था में)

$AD = C + I$ (बंद अर्थव्यवस्था में)

प्रस्तुत अध्याय में द्वि–क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में आय उत्पादन निर्धारण का विश्लेषण किया गया है। द्वि–क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में समग्र मांग दो हिस्सों से मिलकर बनी होती है।

1. उपभोग मांग 2. विनियोग मांग

उपभोग मांग उपभोग की सीमान्त प्रवृति तथा आय पर निर्भर करती है।

उपभोग की सीमान्त प्रवृति के दिए होने पर उपभोग मांग आय पर निर्भर करती है। अतः उपभोग मांग आय का फलन है।

समीकरण के रूप में $C = f(Y)$

विनियोग मांग दो तत्वों पर निर्भर करती है।

1. पूँजी की सीमान्त कार्यदक्षता (Marginal efficiency of Capital)
2. ब्याज दर (Rate of Interest)

इसमें से ब्याज दर तुलनात्मक रूप से स्थिर रहती है और अल्पकाल में सामान्यतः बदलती नहीं है।

अतः विनियोग मांग मुख्यतया पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता में बदलाव पर निर्भर करती है। पूंजी की सीमान्त कार्यकुशलता से तात्पर्य उस प्रत्याशित लाभ की दर से है जो अपने पूंजी परिसम्पति के विनियोग पर प्राप्त होता हैं।

घरेलू निवेश मांग = सकल घरेलू पूंजी निर्माण + बिना बिके माल के स्टॉक में बदलाव।

समग्र पूर्ति :–

समग्र पूर्ति से तात्पर्य उत्पाद की कुल पूर्ति से है। समग्र पूर्ति का एक हिस्सा उपभोग के प्रयोग के लिए बेचा जाता है और दूसरा हिस्सा बिना बिके स्टॉक से है।

अर्थव्यवस्था में कुल उपभोग व्यय (C) और कुल बचतें (S) का योग होती है। उपभोग व्यय जहां उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन पर किया जाता है वहीं कुल बचतें पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन में निवेश की जाती है। समीकरण के रुप में समग्र पूर्ति –

Aggregate supply $= C + S$

समग्र पूर्ति से तात्पर्य बाजार में बिकने के लिए कुल उत्पाद के मौद्रिक मूल्य से है।

एक द्विस्तरीय अर्थव्यवस्था में साम्य आय स्तर का निर्धारण

एक ऐसी अर्थव्यवस्था जिसमें दो क्षेत्र हैं एक घरेलू क्षेत्र और दूसरा उत्पादक क्षेत्र। इसमें समग्र मांग वक्र व समग्र पूर्ति वक्र निम्न प्रकार से प्राप्त किये जाते हैं।

समग्र मांग वक्रः– ऐसी अर्थव्यवस्था जिसमें दो क्षेत्र हैं इसमें घरेलू क्षेत्र में मांग अंतिम उपभोग के लिए होती है तथा उत्पादक क्षेत्र में घरेलू निवेश के लिए मांग होती है। यह भी माना जाता है कि निवेश स्वायत्त है।

अतः $I = Ia$ (स्वायत्त विनिवेश)

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अतः $AD = C + Ia$

$AD = a + b \cdot Y_d + Ia$ (चूंकि $C = a + b \cdot Y_d$)

अतः समग्र मांग वक्र को ग्राफ में निम्नानुसार बनाया जाता है।

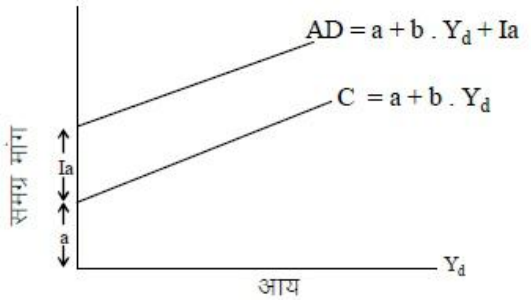

रेखाचित्र 21.1

रेखाचित्र में सर्वप्रथम उपभोग वक्र को बनाया जाता है उपभोग वक्र $C = a + b\,Y_d$ में a स्वायत उपभोग है। यह स्थिर उपभोग के उस स्तर को बताता है जो आय के शून्य स्तर पर होता है। C में I_a को जोडने पर समग्र मांग प्राप्त होती है चूंकि निवेश स्वायत है अतः यह उपभोग फलन के समानान्तर जुड़ जाता है। एक सारणी के द्वारा समग्र मांग को निम्न प्रकार से ज्ञात कर सकते हैं।

माना कि स्वायत्त उपभोग (a) = 3000

तथा स्वायत्त निवेश (Ia) = 5000

तथा उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति (MPC) = b = 0.7

तालिका 21.1

Y_d	स्वायत्त उपभोग a=1000	$b \cdot Y_d$ $0.70 \times Y_d$	C= a+b.Y	Ia	AD= C+Ia
1000	1000	700	1700	5000	6700
2000	1000	1400	2400	5000	7400
3000	1000	2100	3100	5000	8100
4000	1000	2800	3800	5000	8800
5000	1000	3500	4500	5000	8500

समग्र पूर्ति से तात्पर्य बाजार में बिकने के लिए कुल उत्पाद के मौद्रिक मान से है।

निम्न रेखाचित्र में समग्र पूर्ति वक्र को दिखाया गया है।

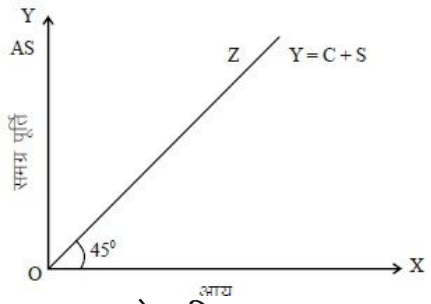

रेखाचित्र 21.2

रेखाचित्र 21.2 में एक रेखा OZ ऐसी बनाई गई है जो X और Y दोनों अक्ष से 45° डिग्री का कोण बनाती है। यह समग्र पूर्ति वक्र को प्रदर्शित करती है। इसे आय रेखा के नाम से भी जाना जाता है। यह 45° डिग्री की सरल रेखा दो बातें बतलाती है–

1. समग्र उत्पाद
2. राष्ट्रीय आय को मौद्रिक रूप में

वास्तव में राष्ट्रीय उत्पाद और राष्ट्रीय आय एक ही है।

आय रेखा OZ (जो X अक्ष के साथ 45° डिग्री का कोण बनाती है) व उपभोग वक्र C के द्वारा समाज की बचत को दर्शाया गया है। जैसे जैसे आय बढ़ती है वैसे वैसे बचत भी बढ़ती जाती है।

आय के साम्य स्तर का निर्धारण

आय के साम्य स्तर, आय या उत्पाद का वह स्तर है जहां पर समग्र मांग = समग्र पूर्ति

$AD = AS$

समग्र मांग व समग्र पूर्ति वक्र को एक साथ बनाने पर निम्नानुसार आय के साम्य स्तर का निर्धारण होता है।

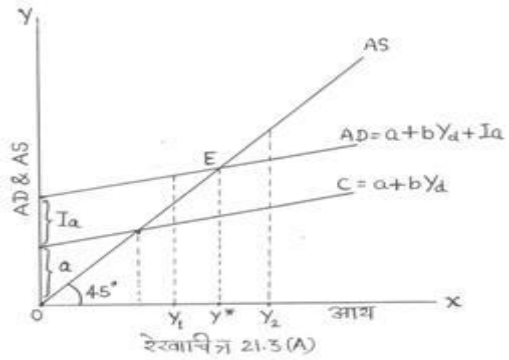

रेखाचित्र 21.3 (A)

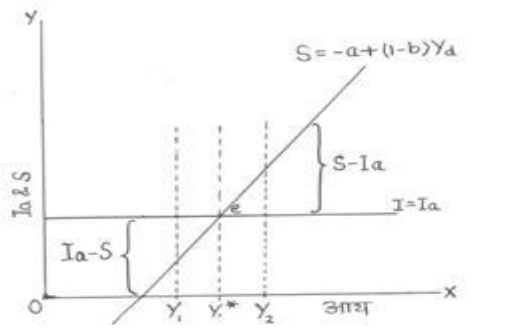

रेखाचित्र 21.3 B

चित्र में पेनल (A) में E बिन्दु आय के साम्य स्तर को बताता है। यहां पर $AD = AS$

$C + Ia = C + S$

$Ia = S$

पैनल (B) में बचत फलन $S = -a + (1-b)\,Y$ को चित्रित किया गया है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

निवेश स्वायत है और स्थिर है। अतः इसे X अक्ष के समानान्तर बनाया गया है।

निवेश और बचत फलन एक दूसरे को e बिन्दु पर काटते हैं और यह उपर पैनल के संतुलन बिन्दु E के एकदम नीचे है। अतः समग्र मांग व समग्र पूर्ति जिस बिन्दु पर बराबर होते है वह साम्य बिन्दु होता है। इसी बिन्दु पर Ia व S दोनों बराबर होते है जोकि आय के साम्य स्तर को बताता है।

अगर उत्पत्ति आय के Y_1 स्तर पर पूर्ण, रोजगार की स्थिति आती है ऐसी स्थिति में $Y_1 < Y^*$ अतः $AD > AS$ और यह अन्तराल Ia - S के बराबर है। यह मुद्रा स्फीति कारक अन्तराल (Inflationary gap) कहलाता है।

आय के Y_2 स्तर पर $Y_2 > Y^*$ यहां पर $AD < AS$ और यह अन्तराल S - Ia के बराबर है। यह अपस्फीतिकारक अंतराल (Deflationary gap) कहलाता है।

यदि मुद्रास्फीतिकरक अंतराल (Inflationary gap) की स्थिति है तो समग्र मांग को कम करके इसे ठीक किया जा सकता है।

यदि अपस्फीतिकारक अंतराल (Deflationary gap) की स्थिति है तो समग्र मांग को बढ़ाकर अर्थव्यवस्था को पुनः साम्य स्तर पर लाया जा सकता है।

गणितीय तरीके से आय के साम्य को निम्न प्रकार से समझा सकते हैं।

$$AS = Y$$

तथा $$AD = C + Ia$$

साम्य आय के स्तर के लिए

$$AS = AD$$

$$Y = C + Ia$$

चूंकि $$C = a + bY$$

$$Y = a + bY + Ia$$

$$Y - bY = a + Ia$$

$$Y(1-b) = a + Ia$$

$$Y = \frac{1}{(1-b)}(a + Ia)$$

यह साम्य आय का स्तर है

यहां पर b - सीमान्त उपभोग की प्रवृति

1 - b = 1 - MPC = MPS (बचत की सीमान्त प्रवृति)

अतः साम्य आय

$$Y = \frac{1}{1 - MPC}(a + Ia)$$

or $$Y = \frac{1}{MPS}(a + Ia)$$

उदाहरण 'अर्थव्यवस्था में यदि स्वायत्त निवेश 200 रु. है और दिया हुआ उपभोग फलन $C = 80 + 0.75Y$ है तो –

1. तो आय का साम्य स्तर क्या होगा ?
2. राष्ट्रीय आय में कितनी वृद्धि होगी यदि विनियोग 25 करोड़ से बढ़ता है?

हल : दिया है $Ia = 200$

$\Delta I = 25$

$C = 80 + 0.75Y$

$AS = Y,\ AD = C + Ia$

$AS = AD$

$Y = C + Ia$

$Y = 80 + .75Y + 200$

$(Y - .75Y) = 80 + 200$

$Y(1 - .75) = 280$

$.25Y = 280$

$$Y = 280 \times \frac{100}{25} = 1120$$

साम्य आय का स्तर 1120 करोड़ के बराबर होगा।

गुणक का मान $$K = \frac{1}{1 - MPC} = \frac{1}{1 - .75} = 4$$

$$K = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

$$\Delta Y = K.\Delta I$$

$= 4 \times 25$ करोड़

$= 100$ करोड

निवेश गुणक की अवधारणा

सबसे पहले 1931 के दशक में आर. एफ. काहन ने रोजगार गुणक को प्रतिपादित किया।

1930 के दशक में जब अमेरिका और यूरोप में आर्थिक मंदी छाई हुई थी तब जे. एम. कीन्स ने इस समस्या से निजात पाने के लिए समग्र मांग को बढ़ाने का समर्थन किया और इसके साथ ही कीन्स ने निवेश गुणक का विचार प्रस्तुत किया। कीन्स के गुणक को निवेश गुणक या आय गुणक भी कहते हैं। गुणक की अवधारणा, आय, उत्पादन व रोजगार के सिद्धान्त के लिए महत्वपूर्ण घटक है।

यह प्रारम्भिक निवेश और इसके परिणामस्वरुप आय में होने वाली वृद्धि के बीच सम्बन्ध बताता है। इसके अनुसार जब अर्थव्यवस्था में प्रारम्भिक निवेश किया जाता है तो आय निवेश के बराबर न होकर उससे कई गुना अधिक बढ़ती है। प्रारम्भिक निवेश के फलस्वरुप जितना गुना आय बढ़ती है वह निवेश गुणक कहलाता है। अगर अर्थव्यवस्था में 100 करोड़ रु. के निवेश के फलस्वरुप आय 500 करोड़ रू. बढ़ती है तो

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

$$\text{निवेश गुणक} = \frac{500 \text{ करोड़ रु.}}{100 \text{ करोड़ रु.}} = 5$$

अतः निवेश गुणक का मूल्य आय में परिवर्तन तथा निवेश में परिवर्तन के अनुपात के बराबर होता है। गणितीय सूत्र में

$$K = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

यहां K = निवेश गुणक का सूचक है।
ΔY = आय में परिवर्तन का सूचक है।
ΔI = निवेश में परिवर्तन का सूचक है।

गुणक की अवधारणा इस तथ्य पर आधारित है कि एक व्यक्ति का व्यय दूसरे व्यक्ति की आय के बराबर होता है। आय का कितना हिस्सा उपभोग के लिए बढ़ाया जाता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि व्यक्ति की सीमान्त उपभोग की प्रवृत्ति (MPC) कितनी है। यदि MPC उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति अधिक है तो लोग आय का बड़ा हिस्सा उपभोग पर खर्च करेंगे जिससे निवेश की तुलना में आय में कई गुना वृद्धि होती है अतः K (निवेश गुणक) व उपभोग की सीमान्त प्रवृति के बीच सीधा सम्बन्ध है।

जबकि बचत की सीमान्त प्रवृति जितनी ज्यादा होगी उतना ही निवेश गुणक का मान कम होगा। अतः निवेश गुणक व बचत की सीमान्त प्रवृति के बीच प्रतिलोम सम्बन्ध है।

K, MPC व MPS के बीच सम्बन्ध को निम्न प्रकार से लिखते हैं।

यदि MPC= .75 है

तब $$K = \frac{1}{1-MPC}$$

$$= \frac{1}{1-.75}$$

$$= \frac{1}{.25} = 4$$

हम जानते हैं कि MPC + MPS = 1

या MPS = 1 - MPC

अतः MPS = 1 - .75

= .25

या $$K = \frac{1}{MPS} = \frac{1}{.25} = 4$$

यदि MPC, शून्य के बराबर है जो कि एक दुर्लभ स्थिति है तो उस स्थिति में

$$K = \frac{1}{1-0} = 1$$

तब गुणक का मान 1 होगा

यदि MPC, एक के बराबर है तो गुणक

$$K = \frac{1}{1-0} = \frac{1}{0} = \infty$$

उपरोक्त दोनों गुणक की न्यून तथा उच्चतम सीमा है।

वास्तव में MPC का मान 0 से 1 के बीच होता है

$$0 < MPC < 1$$

इसलिए हमेशा गुणक का मूल्य एक और अनन्त के बीच रहता है।

गुणक प्रक्रिया का चित्र द्वारा निरूपण

Diagramatic presentation of the multiplier process

हम जानते हैं कि अर्थव्यवस्था में साम्य उस बिन्दु पर होता है, जहां पर समग्र मांग, समग्र पूर्ति के बराबर होता है या जहाँ पर बचत, निवेश के बराबर होता है।

1. समग्र मांग – समग्र पूर्ति वक्र विधि

समग्र मांग उपभोग खर्च व निवेश खर्च के बराबर होती है। जब निवेश खर्च बढ़ता है तब समग्र मांग वक्र ऊपर की ओर विवर्तित हो जाता है तथा साम्य परिवर्तित होकर ऊँची आय पर संतुलन में आता है।

गुणक प्रक्रिया में निवेश के बढ़ने पर आय में कई गुणा वृद्धि होती है जिसे चित्र में दिखाया गया है।

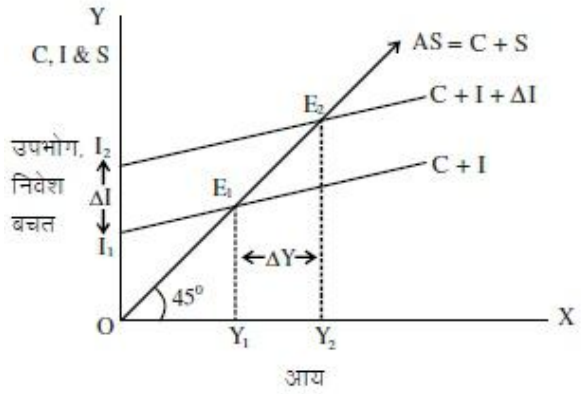

रेखाचित्र 21.4

रेखाचित्रानुसार जब $I_1 I_2 = \Delta I$ निवेश बढ़ाया जाता है तो आय बढ़कर $Y_1 Y_2 = \Delta Y$ हो जाती है।

अतः निवेश गुणक $$= \frac{Y_1 Y_2}{I_1 I_2} = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

यह गुणक की अग्रिम प्रक्रिया (forward working of the multiplier) नाम से जानी जाती है। यदि निवेश में कमी होती है

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तो आय में कई गुणा कमी आती है जिसे गुणक की पश्चगामी प्रक्रिया (Backward working of the multiplier) कहते हैं।

(2) बचत व निवेश विधि

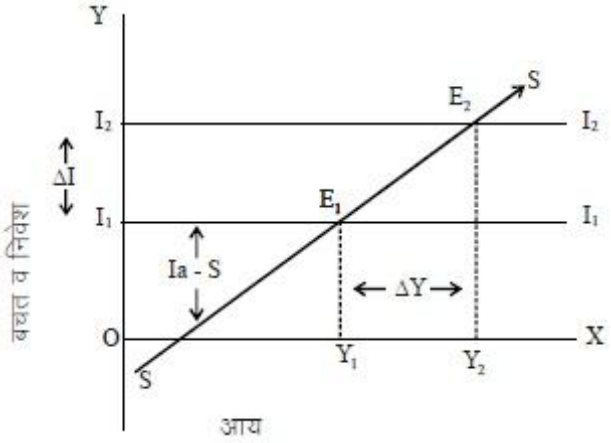

रेखाचित्र 21.5

रेखाचित्र 21.5 में बचत व निवेश वक्र प्रारम्भ में E_1 बिन्दु पर संतुलन में होते है। प्रारम्भिक निवेश I_1 से दर्शाया गया है। जब निवेश बढ़ता है तो निवेश वक्र ऊपर की ओर खिसक जाता है। यहः I_2 से प्रदर्शित किया गया है अतः नया संतुलन बिन्दु E_2 पर है। जहां $S=I_2$ होता है। अतः I_1I_2 निवेश के बढ़ने के फलस्वरुप आय में Y_1Y_2 की वृद्धि होती है।

$$\text{अतः निवेश गुणक} = \frac{Y_1Y_2}{I_1\ I_2} = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

कीन्स के आय और रोजगार के सिद्धांत में गुणक की अवधारणाा का महत्वपूर्ण स्थान है। गुणक आय और रोजगार सिद्धांत में निवेश के महत्व को स्प ट करता है। निवेश में वृद्धि होने से राष्ट्रीय आय में कई गुना वृद्धि होती है। इसी प्रकार आय के किसी स्तर पर सम्रग मांग सम्रग पूर्ति से अधिक होती है तो मुद्रा स्फीति की दशा उत्पन्न होती है इसके विपरित यदि समग्र मांग सम्रग पूर्ति से कम होने पर अपस्फीति दशा प्रकट होती है। इस प्रकार गुणक व्यापार चक्रों को समझाने में भी सहायता प्रदान करता है। इसीके आधार पर नीति निर्माण में भी सहायता मिलती है। गुणक की सहायता से बचत व निवेश में समानता स्थापित की जा सकती है। पूर्ण रोजगार लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निवेश में कितनी वृद्धि होनी चाहिए, यह गुणक के मूलय द्वारा निर्धारित होता है। विकास में सार्वजनिक निवेश की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस प्रकार गुणक की अवधारणा द्वारा अधिक स्पष्ट होती है। सरकार सार्वजनिक व्यय की मात्रा निर्धारित करती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- आय एवं रोजगार का साम्य स्तर :– जहां पर समग्र मांग, समग्र पूर्ति के बराबर होती है वह आय तथा रोजगार का स्तर, आय व रोजगार का साम्य स्तर कहलाता है।

$$AD = AS$$
$$C + I = C + S$$
$$I = S$$

- आय व रोजगार का साम्य स्तर वह भी है जहां पर कुल बचत, कुल निवेश के बराबर होती है।
- एक खुली अर्थव्यवस्था में समग्र मांग के चार घटक होते है
  (i) उपभोग खर्च (C) (ii) विनियोग खर्च (I)
  (iii) सरकारी खर्च (G) (iv) शुद्ध निर्यात (X-M)
- साम्य आय

$$Y = \frac{1}{1 - MPC}(a + Ia)$$

जहां पर $C = a + bY$ में
a – स्वायत्त उपभोग है।
तथा Ia - निवेश है।

- निवेश गुणक की अवधारणा :–
  आय में परिवर्तन का निवेश मे परिवर्तन का अनुपात निवेश गुणक कहलाता है।

$$K = \frac{\Delta Y}{\Delta I}$$

K – गुणक
ΔY – आय में परिवर्तन
ΔI – निवेश में परिवर्तन

- गुणक का मान एक अर्थव्यवस्था में उपभोग की सीमान्त प्रवृति के स्तर पर निर्भर करता है। जितना अधिक MPC का मूल्य होगा उतना अधिक गुणक का मूल्य होगा।
- गुणक को MPS के रुप में निम्न प्रकार से लिखते है–

$$K = \frac{1}{1 - MPC} = \frac{1}{MPS}$$

जितना कम MPS का मूल्य होगा उतना ही गुणक का मूल्य अधिक होगा।

- यदि निवेश बढ़ता है तो आय के स्तर को बढ़ाएगा यह विधि गुणक की अग्रिम प्रक्रिया (forward working of Multiplier) कहलाती है।
- यदि निवेश घटता है तो वह आय के स्तर को भी घटाता है यह गुणक की पश्चगामी प्रक्रिया (Process Backword working of multiplier) कहलाता है।
- एक अर्थव्यवस्था में मांगी जाने वाली कुल वस्तुओं व सेवाओं की जोड़ को समग्र मांग कहते हैं। यह एक साल में लोगों द्वारा वस्तुओं और सेवाओं पर किये गये कुल खर्चे (Expenditure) के रूप में व्यक्त की जाती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

◆ एक दिये हुये समय में अर्थव्यवस्था में जो कुल उत्पाद उपलब्ध है उसे समग्र पूर्ति कहते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. समग्र मांग किसके बराबर होती है।
   (अ) I+S (ब) C+I
   (स) शून्य (द) अनन्त
2. जब उपभोग की सीमान्त प्रवृति (MPC) शून्य के बराबर होती है तो गुणक का मूल्य होता है –
   (अ) 100 (ब) 1
   (स) शून्य (द) अनन्त
3. जब बचत की सीमान्त प्रवृति 0.5 के बराबर है तो गुणक का मूल्य होता है –
   (अ) 1 (ब) 2
   (स) शून्य (द) अनन्त
4. गुणक का सूत्र निम्न में से कौन सा है?
   (अ) $\frac{1}{1-MPC}$ (ब) $\frac{MPC}{MPS}$
   (स) $\frac{1}{MPC+MPS}$ (द) $\frac{1}{MPC}$
5. रोजगार गुणक की अवधारणा किसके द्वारा प्रतिपादित की गई?
   (अ) रिचर्ड गुडविन (ब) जे.एम. कीन्स
   (स) जे.एस. डयूसनबरी (द) आर.एफ. काहन

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. गुणक से आप क्या समझते हैं?
2. यदि MPC = 0.9 है तो गुणक का क्या मूल्य होगा?
3. आय व रोजगार के साम्य स्तर से आप क्या समझते हैं?
4. सम्रग मांग के महत्वपूर्ण घटक कौन कौन से है?
5. सम्रग पूर्ति के घटक कौन कौन से है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. गुणक की कार्यप्रणाली को चित्र द्वारा समझाइये।
2. गुणक का मूल्य सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति द्वारा कैसे निर्धारित होता है?
3. यदि MPS = 0.25 तो गुणक का सूत्र लिखकर गुणक का मान ज्ञात कीजिए।
4. गुणक के मूल्य की न्यूनतम व उच्चतम सीमा क्या होती है?
5. गुणक का व्यावहारिक महत्व क्या है?

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. आय के साम्य स्तर को चित्र व सूत्रों की सहायता से समझाइये।
2. बचत व विनियोग की सहायता से आय के साम्य स्तर को चित्र द्वारा समझाइये।
3. निवेश गुणक से आप क्या समझते है उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति व निवेश गुणक में क्या सम्बन्ध है?

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
ब	ब	ब	अ	द

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय 22

अधिमांग एवं न्यून मांग अवधारणा
(Concept of Excess Demand and deficient Demand)

पिछले अध्याय में हम कीन्स द्वारा प्रतिपादित आय निर्धारण के सिद्धान्त का अध्ययन कर चुके हैं। कीन्स ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के विचारों की कटु आलोचना की है।

इस पाठ के अध्ययन करने से पूर्व हमें प्रतिष्ठित और केन्जीय विचारधारा की प्रमुख विचारों से परिचित होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के अनुसार आय का उत्पादन निर्धारण वास्तविक घटकों जैसे पूँजी स्टॉक, श्रम की पूर्ति द्वारा प्रभावित होता था। सामान्य कीमत स्तर का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उनके अनुसार सामान्य कीमत मुद्रा की पूर्ति द्वारा निर्धारित होती थी।

कीन्स के विचारों का प्रार्दुभाव सन् 1930 की व्यापक आर्थिक मन्दी के समय हुआ। कीन्स के अनुसार आय और उत्पादन के निर्धारण का सिद्धान्त कीमत स्तर को स्थिर मानकर चलता है। इनके अनुसार आय का निर्धारण उस बिन्दु पर होता है जहाँ समग्र मांग समग्र पूर्ति के बराबर होती है। कीन्स ने मन्दी में फैली व्यापक बेरोजगारी और अतिरिक्त उत्पादन क्षमता का प्रमुख कारण प्रभावपूर्ण मांग की कमी को बताया था।

समग्र मांग (AD) समग्र पूर्ति (AS) मॉडल द्वारा सामान्य कीमत स्तर का निर्धारण तथा उत्पादन में होने वाले उतार चढ़ाव का पता चलता है। उसके आधार पर मौद्रिक एवं राजकोषीय उपायों को सरकार द्वारा अपनाया जाता है। सबसे पहले हमें यह जानना आवश्यक है कि समग्र मांग और समग्र पूर्ति क्या है। इसलिए पहले इन दोनों अवधारणाओं को समझना आवश्यक है। आइये इन अवधारणाओं को हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं।

समग्र मांग (AD) –

समग्र मांग में उपभोग व्यय, निजी विनियोग व्यय, सरकार द्वारा वस्तु और सेवाओं का क्रय और शुद्ध निर्यात शामिल होते हैं। (Y=C+I+G+Xn) अन्य बातों के समान रहने पर विभिन्न कीमत स्तर पर जो उपभोक्ताओं, विनियोगकर्त्ताओं सरकार और विदेशियों द्वारा वस्तु और सेवाएँ खरीदी जाती हैं उसे समग्र मांग कहते हैं।

समग्र मांग के अवयव समीकरण के रूप में इस प्रकार व्यक्त किए जा सकते हैं–

$Y = C+I+G+Xn$

जहाँ

C = उपभोग व्यय

I = विनियोग व्यय

G = सरकारी व्यय

Xn = X-M जहाँ X= कुल निर्यात, M = कुल आयात

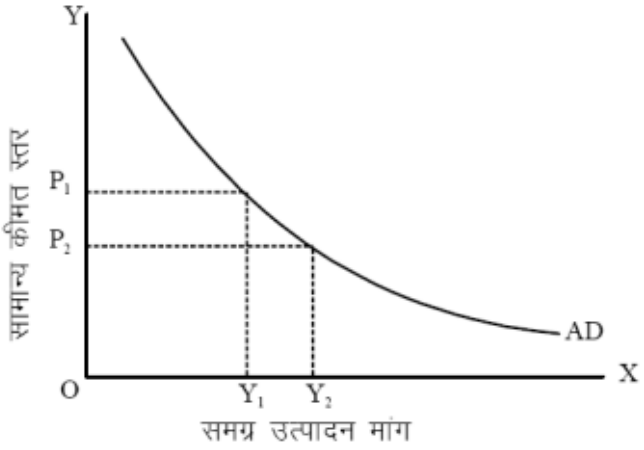

रेखाचित्र 22.1

चित्र द्वारा समग्र मांग वक्र को दर्शाया गया है। x अक्ष पर समग्र उत्पादन मांग और Y अक्ष पर सामान्य कीमत स्तर है। यह वक्र समग्र वस्तु और सेवाओं की मांग और सामान्य कीमत स्तर में सम्बन्ध को बताता है। प्रारम्भिक कीमत OP_1 और उत्पादन OY_1 हैं। यदि कीमतें बढ़कर OP_1 से OP_2 होती है, तो इसके तीन प्रभाव पड़ते हैं :–

1- कीमत बढ़ने पर उपभोग व्यय घट जाता है।

2- कीमत बढ़ने पर लोगों को लेन–देन उद्देश्य से अधिक मुद्रा की आवश्यकता होती है, जिससे ब्याज दर बढ़ती है, परिणामस्वरुप विनियोग की मांग घट जाती है।

3- कीमत बढ़ने पर आयात अधिक व निर्यात कम होते हैं,

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जिससे शुद्ध निर्यात (X-M) की मात्रा कम हो जाती है, इस प्रकार कीमत में वृद्धि होने पर समग्र मांग कम हो जाती है। चित्र 22.1 के अनुसार समग्र उत्पादन मांग OY_2 से घटकर OY_1 हो जाती है। इसके विपरीत कीमत घटने पर समग्र उत्पादन की मांग बढ़ जाती है।

समग्र मांग वक्र की व्युत्पत्ति –

समग्र मांग को कीन्स के आय निर्धारण चित्र A के द्वारा व्युत्पत्ति कर सकते हैं।

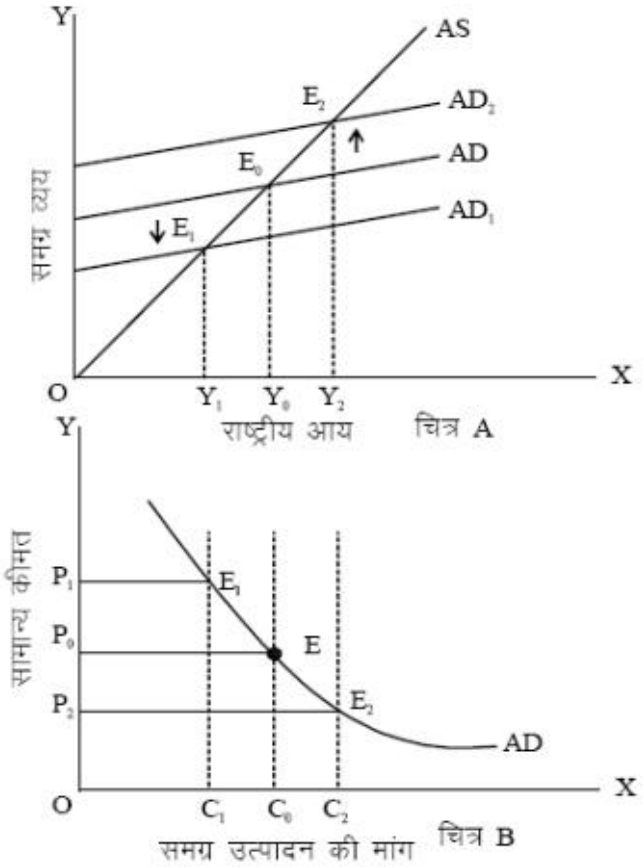

रेखाचित्र 22.2

चित्र A में कीन्स द्वारा समग्र व्यय (नियोजित व्यय) को विभिन्न राष्ट्रीय आय स्तर (GNP) पर बताया गया है, जबकि चित्र B में व्युत्पन्न समग्र मांग विभिन्न कीमत स्तरों पर दर्शाई गई है।

प्रारम्भिक साम्य में समग्र मांग, समग्र पूर्ति (45° रेखा) को E_0 पर काटती है। जहाँ आय Y_0 निर्धारित होती है। खण्ड B में Y_0 आय के स्तर पर समग्र मांग C_0 और सामान्य कीमत स्तर P_0 है। इसी प्रकार यदि सामान्य कीमत स्तर पर P_2 हो जाती है तो लोगों की क्रय शक्ति बढ़ने पर उपभोग व्यय AD से AD_2 ऊपर की ओर खिसक जाता है। साम्य AD_2 = AS (45° रेखा) E_2 पर आय Y_2 होती है। समग्र मांग OC_2 होता है। इस प्रकार कम कीमत पर समग्र उत्पादन मांग अधिक होती है इसके विपरीत बढ़ी हुई कीमत पर साम्य E_1 बिंदु पर प्राप्त होगा जहाँ AS=AD_1 आय Y_1 होती है और समग्र मांग OC_1 घट जाती है। इस प्रकार सामान्य कीमत स्तर और समग्र उत्पादन की मांग में विपरीत सम्बन्ध पाया जाता है, जो चित्र B में AD वक्र से स्पष्ट होता है।

समग्र पूर्ति **(AS)** *–*

अन्य बातें समान रहने पर विभिन्न सम्भव कीमतों पर फर्में जो वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करना चाहती है, समग्र पूर्ति कहलाती है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के सिद्धान्त पूर्ण रोजगार की मान्यता पर आधारित है। अतः पूर्ण रोजगार की स्थिति में समग्र पूर्ति वक्र एक लम्बवत रेखा होती है, जो निम्न चित्र 22.3 द्वारा दर्शायी जाती है। यहाँ AS पूर्णतया बेलोचदार है।

रेखाचित्र 22.3

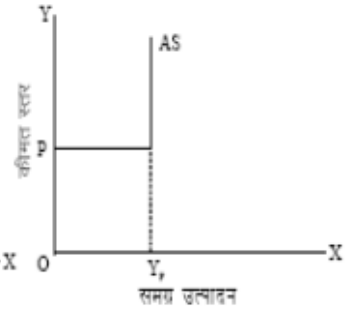

रेखाचित्र 22.4

इसके विपरीत कीन्स के अनुसार समग्र पूर्ति वक्र मन्दी के समय प्रारम्भ में क्षैतिज होता है फिर पूर्ण रोजगार बिन्दु पर लम्बवत् होता है। चित्र 22.4 में दर्शाया गया है। क्षैतिज क्षेत्र में समग्र मांग में वृद्धि होने पर उत्पादन में वृद्धि होती है एवं कीमतें अपरिवर्तित रहती हैं, जबकि लम्बवत् समग्र पूर्ति वक्र अर्थात् पूर्ण रोजगार पर समग्र मांग में वृद्धि होने पर उत्पादन में वृद्धि नहीं होती अपितु कीमतों में वृद्धि होती है।

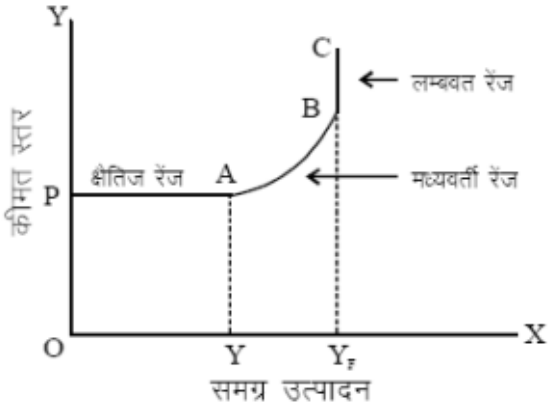

रेखाचित्र 22.5

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चित्र 22.5 में क्षैतिज रेंज (PA) केन्जीयन रेंज कहलाती है, अप्रयुक्त साधनों के उपयोग से प्रति इकाई उत्पादन लागत में वृद्धि नहीं होने पर कीमतों में भी वृद्धि नहीं होती है। इस रेंज में केवल उत्पादन में वृद्धि होती है। अर्थव्यवस्था में मंदी की स्थिति को वक्र के PA भाग में व्यक्त किया गया है।

मध्यवर्ती रेंज में (Y और Y_F मध्य) समग्र मांग में वृद्धि कीमतों में भी वृद्धि करती है। पूर्ण रोजगार पूर्व उत्पादन बढ़ाने पर प्रति इकाई लागत भी बढ़ती है जिससे कीमतों में भी वृद्धि होती है।

लम्बवत् रेंज (BC) पूर्ति वक्र पूर्णतया बेलोचदार होता है, जो कि उत्पादन को पूर्ण रोजगार स्तर को दर्शाता है। इसे प्रतिष्ठित रेंज भी कहते हैं। यहाँ कीमतों में परिवर्तन होता है एवं उत्पादन मात्रा अपरिवर्तित रहती है क्योंकि साधनों का पूर्ण क्षमता तक उपयोग हो चुका होता है।

समष्टि आर्थिक साम्य –

समग्र मांग व पूर्ति की आवश्यक जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् हम समष्टि आर्थिक साम्य को AD-AS मॉडल द्वारा समझने का प्रयास करते हैं।

अल्पकालीन संतुलन अर्थव्यवस्था की वास्तविक स्थिति को बताता है। वास्तविक GDP, सामर्थ्य (Potential GDP) के इर्द–गिर्द रहती है। मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति किस प्रकार कारगर सिद्ध होती है, यह AD-AS मॉडल द्वारा बताया गया है।

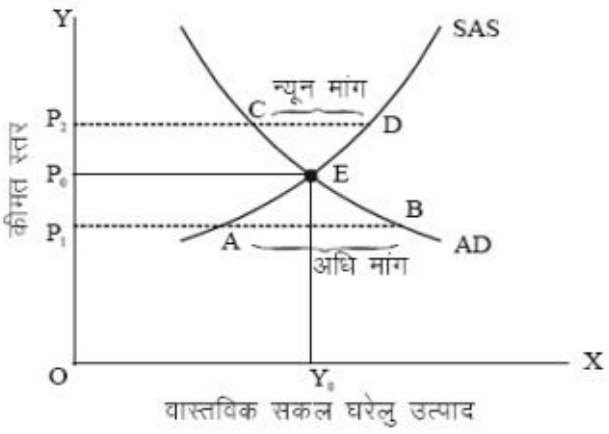

रेखाचित्र 22.6

समग्र मांग (AD) अल्पकालीन पूर्ति वक्र (SAS) के बराबर होने पर साम्य E पर होता है। जहाँ आय OY_0 और कीमत स्तर P_0 निर्धारित होता है। यदि कीमत P_2 होती है तो समग्र पूर्ति, समग्र मांग से अपेक्षाकृत अधिक होती है (CD) जिसे न्यून मांग कहते हैं। ऐसी स्थिति में उत्पादक उत्पादन में कमी करता है। मांग कम होने पर वह उत्पादित माल को बेच नहीं पाता है, अतः उसके पास तैयार माल स्टॉक के रुप में जमा होता जाता है। कीमत क्रमशः कम होने लगती है और पुनः P_0 साम्य कीमत को प्राप्त करती है।

इसके विपरीत यदि कीमतें OP_1 होती है तो समग्र मांग, समग्र पूर्ति की अपेक्षाकृत अधिक होती है, (AB) जिसे आधिक्य मांग कहा जाता है। अधिक मांग उत्पादक को अधिक उत्पादन के लिए प्रेरित करती है। उत्पादक द्वारा उत्पादन साधनों की मांग बढ़ने पर साधन लागत में वृद्धि होती है। अन्ततः वस्तुओं की कीमत बढ़ने लगती है और पुनः साम्य P_0 कीमतों पर स्थापित होता है।

अल्पकाल में मौद्रिक मजदूरी दर स्थिर होती है। वास्तविक GDP पर साम्य सामर्थ्य GDP से कम या अधिक हो सकता है।

दीर्घकाल में साम्य तब होता है, जब समग्र मांग, दीर्घकालीन समग्र पूर्ति वक्र के बराबर होता है। दीर्घकालीन पूर्ति वक्र GDP लम्बवत होने पर सामर्थ्य GDP के बराबर होता है। दीर्घकाल में वास्तविक GDP, सामर्थ्य GDP के बराबर होती है।

मन्दी–

जब आर्थिक क्रियाएँ जैसे वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन, रोजगार, आय, मांग तथा कीमतों में पर्याप्त कमी होती है।

समृद्धि–

कीमतों में स्फीतिकारी वृद्धि होती है। उत्पादन, रोजगार और आय ऊँचे स्तर पर होते हैं। वस्तु और सेवाओं की मांग अधिक होती है।

मौद्रिक और राजकोषीय नीति –

ऊपर किये गये विवेचन से स्पष्ट होता है कि मन्दी में न्यून मांग की समस्या उत्पन्न हो जाती है अर्थात् समग्र मांग समग्र पूर्ति से कम होती है। ऐसी परिस्थिति में सरकार उचित राजकोषीय नीति अपनाती है। सरकार सार्वजनिक व्यय में वृद्धि करके मांग में वृद्धि के प्रयास करती है। सार्वजनिक व्यय जैसे सड़क बनवाना, बाँध निर्माण, स्कूलों व अस्पतालों जैसे भवनों का निर्माण आदि जिससे रोजगार, आय और मांग का सृजन होता है। इसी के साथ करों में कमी उपभोक्ताओं के व्यय योग्य आय में वृद्धि करती है। यह प्रयास तभी कारगर होता है जब सरकार करों में कोई वृद्धि नहीं करती है। इसी तरह मौद्रिक नीति में मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि की जाती है जिसके परिणामस्वरुप ब्याज की दर में कमी होती है। निजी विनियोग में वृद्धि होती है। जिसमें समग्र मांग में वृद्धि होती है। इस उद्देश्य हेतु बैंक दर में कमी, खुले बाजार में केन्द्रीय बैंकों द्वारा प्रतिभूतियों का क्रय, तरल नकद कोषानुपातों में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

कमी की जाती है। निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि न्यून मांग में सरकार विस्तारक (Expansionary) मौद्रिक और राजकोषीय नीति अपनाती है। मन्दी में दोनों नीतियों की तुलना करने पर राजकोषीय नीति अधिक सफल होती है। न्यून मांग (मन्दी) के समय व्यवसायियों के पास पहले ही बहुत स्टॉक इक्ट्ठा होता है जिसे वह बेच नहीं पाते। इसलिए ब्याज दर कम होने पर भी विनियोग हेतु प्रेरित नहीं होते। उपभोक्ता वर्ग भी बेरोजगारी और निम्न आय के कारण टिकाऊ वस्तु हेतु ऋण नहीं लेना चाहते हैं। इसलिए मौद्रिक नीति अधिक सफल नहीं होती है।

राजकोषीय नीति –

इस नीति द्वारा सरकार द्वारा कर और व्यय में परिवर्तन द्वारा पूर्ण रोजगार और कीमत स्तर में स्थिरता लाने का प्रयास किया जाता है।

मौद्रिक नीति –

केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा की पूर्ति को नियंत्रित करने और आर्थिक नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपनाई जाती है।

इसके विपरीत मांग आधिक्य में मुद्रा स्फीति के समय सरकार द्वारा संकुचित मौद्रिक और राजकोषीय नीति अपनाई जानी चाहिए। राजकोषीय नीति के तहत् सरकार को करों में वृद्धि, अनावश्यक व्यय में कटौती करके समग्र मांग में कमी की जानी चाहिए। करो की दरों में बहुत अधिक वृद्धि नहीं होनी चाहिए अन्यथा निवेश और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। सरकार द्वारा अनिवार्य बचत स्कीम भी चलायी जा सकती है। सरकार को अतिरेक बजट बनाने का प्रयास करना चाहिए एवं सार्वजनिक ऋणों के पुनः भुगतान को रोक देना चाहिए। इसी परिप्रेक्ष्य में कठोर मौद्रिक नीति अपनाई जानी चाहिए। आधिक्य मांग के कारण कीमतों में वृद्धि को रोकने हेतु केन्द्रीय बैंक, बैंक–दर में वृद्धि, खुले बाजार में प्रतिभूतियों का विक्रय और रिजर्व अनुपात में वृद्धि करता है। साथ ही चयनात्मक साख नियंत्रण जैसे साख सीमा आवश्यकता को बढ़ाता है। साथ ही उपभोक्ता साख को भी नियंत्रित करता है। इन सभी उपायों के अतिरिक्त करेन्सी का विमुद्रीकरण भी किया जा सकता है। इस प्रकार न्यून और आधिक्य मांग की स्थिति में राजकोषीय नीति और मौद्रिक नीति के उचित उपायों के सामंजस्य से उभरा जा सकता है।

विमुद्रीकरण –

जब देश की सरकार पुरानी मुद्रा को कानूनी तौर पर बंद कर देती है। 8 नवम्बर 2016 को हाल ही में सरकार द्वारा 500 और 1000 के नोटों को उसी रात 12 बजे से बंद किए जाने की घोषणा की है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1- समग्र मांग में उपभोग व्यय, विनियोग व्यय, सरकारी व्यय और शुद्ध निर्यात शामिल है– $AD=C+I+G+X_n$

2- समग्र मांग विभिन्न कीमत स्तर पर कुल वस्तु और सेवाओं की मांगी गई मात्रा को व्यक्त करता है।

3- समग्र मांग और सामान्य कीमत स्तर में विपरीत सम्बन्ध होता है।

4- समग्र पूर्ति प्रत्येक सम्भावित कीमत पर फर्मों के कुल वस्तु और सेवाओं के उत्पादन को दर्शाता है।

5- जहाँ समग्र मांग समग्र पूर्ति के बराबर होती है वहाँ कीमत स्तर और समग्र उत्पादन का निर्धारण होता है।

6- न्यून मांग से अर्थ है जब समग्र मांग, समग्र पूर्ति से कम होती है।

7- आधिक्य मांग का अर्थ जब समग्र पूर्ति, समग्र मांग से कम होती है अथवा समग्र मांग की मात्रा समग्र पूर्ति से अधिक होती है।

8- न्यून मांग मन्दी की स्थिति बताती है।

9- आधिक्य मांग मुद्रा स्फीति की स्थिति बताती है।

10- मन्दी में विस्तारक मौद्रिक और राजकोषीय नीति कारगर होती है।

11- मांग आधिक्य (मुद्रा स्फीति) में संकुचित मौद्रिक और राजकोषीय नीति अपनाने पर समग्र मांग में कमी होती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1- न्यून मांग होती है जब –

(अ) AD<AS (ब) AD>AS

(स) AD=AS (द) AD#AS

2- समग्र मांग होती है –

(अ) उपभोग और विनियोग व्यय

(ब) सरकारी व्यय

(स) शुद्ध निर्यात

(द) उपरोक्त सभी

3- मन्दी में राजकोषीय नीति के तहत् उपाय है –

(अ) करों में वृद्धि

(ब) सार्वजनिक व्यय में वृद्धि

(स) सार्वजनिक व्यय में कमी

(द) कीमतों में वृद्धि

4- मुद्रा स्फीति को रोकने हेतु मौद्रिक नीति के तहत उठाया जाने वाला कदम है –

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(अ) बैंक दर में वृद्धि
(ब) करों में कमी
(स) सार्वजनिक व्यय में वृद्धि
(द) बैंक दरों में कमी

5- चित्र में समग्र पूर्ति वक्र किसके अनुसार होता है –

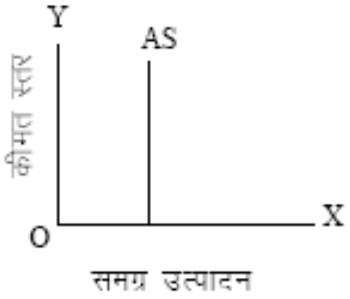

(अ) केन्जीय (ब) प्रतिष्ठित
(स) मौद्रिकवाद (द) रेटेक्स

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1- समग्र मांग का अर्थ बताइये।
2- समग्र मांग के चार अवयव लिखिए।
3- समग्र पूर्ति का अर्थ बताइये।
4- समष्टि आर्थिक साम्य का क्या अर्थ है?
5- मन्दी का अर्थ बताइये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1- न्यून मांग को समझाइये।
2- आधिक्य मांग से क्या तात्पर्य है?
3- मौद्रिक नीति से क्या अभिप्राय है?
4- राजकोषीय नीति के क्या उपकरण है?
5- मुद्रा स्फीति में मौद्रिक नीति के क्या उपाय अपनाये जाते है?

निबन्धात्मक प्रश्न–

1- AD और AS मॉडल की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2- प्रतिष्ठित और कीन्स के पूर्ति वक्र में चित्र की सहायता से भेद कीजिए।
3- मन्दी में राजकोषीय नीति को कैसे प्रभावी रुप से उपयोग में लिया जा सकता है?
4- मुद्रा स्फीति को रोकने के लिए सरकार द्वारा किये जा सकने वाले चार उपाय लिखिए।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
अ	द	ब	अ	ब

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय – 23

सरकारी बजट एवं अर्थव्यवस्था
(Government Budget & Economy)

सरकार की वह क्रिया वित्तीय प्रशासन मानी जाती है जिसके द्वारा सार्वजनिक आय, सार्वजनिक व्यय एवं सार्वजनिक ऋण की व्यवस्था, नियन्त्रण एवं प्रबन्धन किया जाता है। वित्तीय प्रशासन में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि आय को न्याय संगत तरीके से एकत्रित किया जाये और सरकार के व्यय को मितव्ययता पूर्ण ढ़ंग से किया जाये। बजट सरकार की राजस्व नीति का व्यावहारिक रूप होता है। भारत में बजट सामान्यतया आगामी वित्तीय वर्ष हेतु आवश्यक सरकारी खर्च की सुनिश्चिता प्राप्त करने का प्रावधान है।

वित्तीय प्रशासन में बजट महत्वपूर्ण होता है इसे वित्तीय प्रशासन की धुरी कहा जा सकता है सरकार की आय, व्यय और ऋण आदि से सम्बन्धित समस्त क्रियाओं का निर्धारण बजट के माध्यम से होता है।

बजट का अर्थ एवं परिभाषा –

बजट शब्द की उत्त्पति फ्रांसीसी शब्द Bougette से मानी जाती है। जिसका तात्पर्य '' चमड़े के थैले '' । 1733 में बजट शब्द का प्रयोग इंग्लैण्ड में 'जादू के पिटारे' के अर्थ में किया गया।

बजट सरकार की आय एवं व्यय का एक विवरण प्रपत्र है जिसमें आगामी वर्ष के लिये आय–व्यय के अनुमानित आकड़े एवं आगामी वर्ष के सामाजिक–आर्थिक कार्यक्रम तथा आय–व्यय को घटाने–बढ़ाने के लिये प्रस्तावों का विवरण होता है। सामान्यतया बजट का तात्पर्य सरकार के उस विवरण पत्र से होता है जिसमें वर्ष पर्यन्त होने वाले आय–व्यय का ब्यौरा दर्शाया जाता है, व्यापक अर्थ में इसका आशय यह है कि बजट में निहित तथ्यों को उस समय तक गुप्त रखा जाता है जब तक कि उसे देश की संसद के समक्ष प्रस्तुत न कर दिया जावे। विभिन्न विद्वानों ने बजट को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है :–

प्रो. बेस्टेबल (Prof. Bastable) के अनुसार बजट का अर्थ है ''एक दिये गये समय के लिये वित्तीय प्रबन्ध जिसके साथ विधानसभा में स्वीकृति के लिये पेश करने का सामान्य सुझाव जुड़ा हुआ है।''

फिण्डले शिराज के अनुसार ''बजट एक साथ एक रिपोर्ट, एक अनुमान तथा एक प्रस्ताव है। यह एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा वित्तीय प्रशासन की सभी विधियों को सम्बन्धित किया जाता है, उनकी तुलना की जाती है एवं समन्वय स्थापित किया जाता है।''

स्पष्ट है कि बजट के दो पक्ष होते हैं। एक ओर सरकार की प्रत्याशित आय जबकि दूसरी और सरकार के प्रत्याशित व्यय को व्यक्त किया जाता है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सरकार प्रतिवर्ष बजट संसद के समक्ष प्रस्तुत करती है और संसद की स्वीकृति होने के पश्चात इसके प्रस्ताव के अनुसार ही कार्य किये जाते हैं।

बजट के उद्देश्य–

देश की अर्थव्यवस्था को दिशा प्रदान करना बजट का प्रमुख उद्देश्य होता है। देश की अर्थव्यवस्था सरकार के बजट से प्रभावित होती हैं। बजट के प्रमुख मुख्य उद्देश्य निम्न है–

1.– सरकारी बजट से न केवल विकास प्रभावित होता है बल्कि विकास की दिशा भी बजट से निर्धारित होती है।

2.– उत्पादन बढ़ानें मे भी बजट की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है बजट में राहत द्वारा दिये गये करारोपण सम्बन्धी रियायतों एवं शुल्क में राहत द्वारा दिये गये प्रोत्साहन उत्पादन वृद्धि में सहायक होते हैं।

3.– सामान्यतया सरकार बजट के माध्यम से नये कर लगाकर और जनता से ऋण लेकर उसकी क्रय शक्ति में कमी करते हुये कीमत स्तर को नियन्त्रित करती है।

4– देश के आर्थिक व सामाजिक विकास को गति देना एवं आय व धन का पुनर्वितरण करना।

5– देश की उत्पादन संरचना एवं उत्पादन के स्तर को दिशा देना। बजट में करारोपण सम्बन्धी रियायतें एवं प्रोत्साहन उत्पादन वृद्धि में सहायक होता है।

6– देश में प्रचलित मुद्रा स्फीति एवं अवस्फीति का उपचार बजट प्रावधानों में परिवर्तन द्वारा किया जाता है। जिससे आर्थिक स्थिरता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

7– कल्याणकारी राज्य की स्थापना का लक्ष्य बजट की

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सहायता से प्राप्त किया जा सकता है।

8– आर्थिक असमानता पर रोक, सामाजिक सुरक्षा हेतु विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन, आर्थिक विकास हेतु योजनाओं का निर्माण बजट के प्रावधानों के माध्यम से ही किये जाते है।

बजट के प्रकार (स्वरूप) :–

सरकारी बजट को सरकारी आय व व्यय की प्रवृत्ति एवं सन्तुलन के आधार पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. राजस्व एवं पूँजीगत बजट :–

सरकारी बजट सरकार की आय व व्यय को दर्शाने वाला होता है इसे आय व व्यय की प्रवृति के आधार पर निम्न दो भागों में बाँटा जाता है –

(i) राजस्व बजट **(Revenue Budget)** :– यह बजट के प्रथम भाग में ही दर्शाया जाता है, जिसमें राजस्व आय (Revenue Income) या राजस्व प्राप्तियाँ (Revenue Receipts) प्रदर्शित की जाती है। इन प्राप्तियों को भी दो भागों में विभाजित किया जा सकता है –

(i) *राजस्व प्राप्तियाँ एवं राजस्व व्यय* (Revenue Reciepts & Revenue Expenditure) :–

इसके अन्तर्गत वह आय दर्शायी जाती है, जिसका सम्बन्ध उसी वित्तीय वर्ष से होता है, इसे चालू खाता भी कहा जाता है। इस खाते में आय के वे स्त्रोत शामिल होते हैं जिनके बदले में कोई भुगतान नहीं करना होता है जैसे– करों से प्राप्त आय, सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा अर्जित लाभ, सरकारी उद्योग पर प्राप्त ब्याज आदि।

राजस्व बजट के अन्तर्गत राजस्व आय एवं राजस्व प्राप्तियाँ दर्शायी जाती है। राजस्व आय एवं राजस्व प्राप्तियों में (अ) कर राजस्व – जैसे आयकर, निगम कर, सम्पत्ति कर, उपहार कर, शास्ति कर उत्पादन शुल्क, सीमा शुल्क, व्यय इत्यादि आते हैं। (ब) गैर कर राजस्व – में ऋण, ब्याज, शुल्क, शास्ति, जुर्माना इत्यादि आते हैं।

राजस्व व्यय को बजट में गैर विकासात्मक व्यय, तथा विकास व्यय के रूप में विभाजित किया जाता है। गैर विकासात्मक व्यय के अन्तर्गत सरकारी सेवाओं पर व्यय, सरकारी सब्सिडी, सरकारी अनुदान एवं ब्याज की अदायगी शामिल है जबकि विकासात्मक व्यय के अन्तर्गत सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाओं पर व्यय, कृषि एवं सहायता सेवाओं, उद्योग–खनिज, उर्वरक सब्सिडी सामान्य आर्थिक सेवाये, विद्युत सिचाई, बाढ़ नियन्त्रण, सार्वजनिक निर्माण, परिवहन एवं संचार, राज्यों को अनुदान को शामिल किया जाता है।

राजस्व व्यय को भी दो भागों में दर्शाया जाता है। (अ) आयोजना भिन्न व्यय– राजस्व खाते से (ब) आयोजना व्यय–राजस्व खाते से। इन दोनों मदों में सरकारी बजट के आयोजना एवं आयोजना भिन्न मदों में होने वाले व्यय को दर्शाया जाता है।

(अ) कर राजस्व (Tax Revenue)

(ब) गैरकर राजस्व (Non Tax Revenue)

बजट में राजस्व प्राप्तियों के बाद अगले भाग में राजस्व व्यय दर्शाया जाता है। राजस्व व्यय को भी दो भागों में विभाजित किया जाता है।

(अ) आयोजना भिन्न व्यय–राजस्व खाते से (Non plan Expenditure in revenue Account)

(ब) आयोजना व्यय – राजस्व खाते से (Plan Expenditure in Revenue Account)

(ii) पूँजीगत बजट **(Capital Budget)** –

बजट दस्तावेज के दूसरे भाग में इसे दर्शाया जाता है जिसके दो भाग –

(ii) *पूँजीगत प्राप्तियाँ एवं पूँजीगत व्यय* (Capital Reciepts & Capital Expenditure) :–

इसके अन्तर्गत आय के उन समस्त स्त्रोतों को रखा जाता

राजस्व बजट		पूँजीगत बजट	
प्राप्तियों की मदें	व्यय की मदें	प्राप्तियों की मदें	व्यय की मदे
– कर आय	– सरकारी सेवाओं पर व्यय	– निबल घरेलू ऋण	– परिसम्पत्तियों का निर्माण
– लाभ व लाभांश	– ब्याज अदायगी	– निबल विदेशी ऋण	– संचित कोष
– ब्याज आय	– अनुदान	– ऋण वापसी	– आकष्मिक कोष
– गैर कर आय	– सब्सिडी	– लोक सेवा प्राप्तियाँ	
	– सामान्य आर्थिक सेवायें		
	– सार्वजनिक निर्माण		

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

है, जिनके बदले में भुगतान करना आवश्यक होता है। पूँजीगत व्यय खाते में उन व्ययों को शामिल किया जाता है, जिनमें व्यय तो चालू वर्ष में दिया जाये किन्तु इससे सामाजिक कल्याण में वृद्धि चालू वर्ष के साथ–साथ आगामी वर्षों तक होती रहे।

पूँजीगत आय के अन्तर्गत ऋणों की वसूली, विविध प्रकार की प्राप्तियाँ, इत्यादि दर्शायी जाती है, जबकि पूँजीगत व्यय को आयोजना–भिन्न व्यय–पूँजीगत खाते से तथा आयोजना व्यय–पूँजीगत खाते दर्शाया जाता है।

(अ) पूँजीगत प्राप्तियाँ **(Capital Receipts)** – इसके अन्तर्गत ऋणों की वसूली, विविध प्राप्तियाँ, उधार व अन्य देनदारियाँ दर्शायी जाती हैं। इनकी कुल प्राप्तियों का योग पूँजीगत प्राप्तियाँ कहलाती हैं।

(ब) पूँजीगत व्यय **(Capital Expenditure)** – पूँजीगत व्यय को भी दो भागों में बाँटा जाता है। (1) आयोजना भिन्न व्यय–पूँजीगत खाते से (Non Plan Expenditure in capital Acccount) एवं (2) आयोजना व्यय पूँजीगत खाते से (Plan Expenditure in capital Acccount)

2. सरकार की कुल आय एवं कुल व्यय में समानता या अन्तर के आधार पर भी सरकारी बजट के प्रमुख तीन प्रकार निम्न हैं –

(i) बचत का बजट (Surplus Budget)

वह बजट बचत का बजट कहलाता है जिसमें सरकार के व्यय की अपेक्षा आय का आधिक्य हो। अर्थात सरकार की कुल आय उसके कुल व्यय की अपेक्षा अधिक हो।

अर्थात कुल आय > कुल व्यय (धनात्मक अन्तर)

(ii) सन्तुलित बजट (Balanced Budget)

जिस बजट दस्तावेज मे सरकारी आय व सरकारी व्यय दोनों समान हो तो वह सन्तुलित बजट कहलाता है।

सन्तुलित बजट = कुल आय = कुल व्यय

(iii) घाटे का बजट (Deficit Budget)

सरकार द्वारा प्रस्तुत बजट दस्तावेज में सरकारी व्यय की अपेक्षा सरकारी आय कम हो तो उसे घाटे का बजट कहा जाता है। आधुनिक युग में प्रायः सभी लोकतान्त्रिक देशों में सरकार को जनकल्याणकारी कार्यों का निर्वहन हेतु कई प्रकार के व्यय करने पड़ते हैं। आर्थिक विकास की बढती माँग, सामाजिक सुरक्षा योजनाओं पर बढ़ता व्यय, देश की माँग बढ़ने से सरकारों का सार्वजनिक व्यय तेजी से बढ़ता जा रहा है। यही कारण है कि घाटे का बजट, बजट की लोकप्रिय अवधारणा है।

घाटे का बजट= सरकार का कुल व्यय > सरकारी की कुल आय

बदलते परिवेश मे बजट के प्रकार

सामान्यतया सरकारी बजट एक वित्तीय वर्ष की अवधि से सम्बन्धित होता है भारत में वित्तीय वर्ष 1 अप्रेल से 31 मार्च तक होता है। अर्थव्यवस्था में बदलती हुयी परिस्थितियों, बढ़ते सरकारी हस्तक्षेप के कारण बजट की प्रक्रिया एवं बजट के स्वरूप में आधुनिक युग मे परिवर्तन हुये हैं, जिन्हें निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. आम बजट –

आम बजट को पारम्परिक बजट भी कहा जा सकता है, इसका प्रमुख उद्देश्य विधायिका का कार्यपालिका पर वित्तीय नियन्त्रण स्थापित करना रहा है। इस प्रकार के बजट का प्रमुख उद्देश्य सरकारी खर्चों पर नियन्त्रण करना था न कि तीव्र गति से विकास को प्रेरित करना। इस बजट मे मुख्यतः वेतन, मजदूरी, उपकरण, मशीनें आदि के रूप में किये जाने वाले व्यय तथा विभिन्न मदों से होने वाली आय को प्रस्तुत किया जाता है।

पूरक बजट– यदि बजट में स्वीकृत धनराशि 31 मार्च से पूर्व ही समाप्त हो जाये तो इस स्थिति मे सरकार संसद के सम्मुख पूरक बजट प्रस्तुत करती है और अतिरिक्त धनराशि की माँग की जाती है।

लेखानुदान– पिछला बजट 31 मार्च को समाप्त हो जाता है जिसे बढ़ाया नहीं जा सकता, इसीलिये सरकार को 1 अप्रेल को अपने खर्चों के लिये नये बजट की आवश्यकता होती है संसद अस्थायी रूप से सरकार को व्यय के लिये अग्रिम धनराशि देती है।

2. निष्पादन बजट –

कार्य के परिणामों या निष्पादन को आधार बनाकर निर्मित किया गया बजट निष्पादन बजट कहलाता है। निष्पादन बजट को व्यापक कार्यवाही का दस्तावेज माना जाता है। जो कार्यक्रमों, परियोजनाओं से सम्बन्धित संख्यात्मक आँकड़ो एवं क्रियान्वयन की उपलब्धियों का मापन करता है। यह बजट मूलतः लक्ष्योन्मुखी एवं उद्देश्य परक प्रणाली पर आधारित है।

3. जीरोबेस बजट :–

जीरोबेस (शून्य आधारीय) बजट का जनक अमरीका के पीटर. ए. पायर को माना जाता है। 1979 में इसे अमेरिका के राष्ट्रीय बजट में राष्ट्रपति जिमी कार्टर द्वारा अपनाया गया ।

शून्य आधारित बजट प्रणाली व्यय पर अकुंश लगाने की एक तार्किक प्रणाली है इस प्रणाली में विगत व्ययों को आधार नहीं बनाया जाता अर्थात विगत व्ययों को भावी व्यय के लिये तर्क के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है। इस प्रणाली में प्रत्येक क्रिया कलाप को शून्य आधार से पुनः औचित्य निर्धारित करना पड़ता है न कि पुराने व्ययों पर नये व्ययों का प्रावधान करना। इस बजट प्रणाली को सूर्यास्त बजट प्रणाली (सनसेट सिस्टम) भी कहा जाता है।

4. आउटकम बजट –

सामान्य बजट की तुलना मे यह एक कठिन प्रक्रिया है

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जिसमें वित्तिय प्रावधानों को परिणामों के सन्दर्भ में देखा जाता है। बजट मे मूल्याकंन किये जा सकने वाले भौतिक लक्ष्यों का निर्धारण इस उद्देश्य से किया जाता है कि बजट के क्रियान्वयन की गुणवत्ता को परखा जाना सम्भव हो सके। आउटकम बजट में कार्य सम्पादन हेतु किसी भी स्तर पर देशी या रूकावट के बजाय निर्धारित धनराशि को सही समय, सही मात्रा में पहुँचाना होता है।

5. जेन्डर बजटिंग –

जेन्डर बजटिंग के माध्यम से सरकार द्वारा महिलाओं के विकास, कल्याण और सशक्तिकरण से सम्बन्धित योजनाओं और कार्यक्रमों के लिये प्रतिवर्ष बजट में एक निर्धारित राशि की व्यवस्था सुनिश्चित करने के प्रावधान किये जाते है। बजट के प्रावधान पुरूष और स्त्री को अलग–अलग तरीके से प्रभावित करते हैं।

(6) संघीय, प्रान्तीय एवं स्थानीय संस्थाओं के बजट–

संघीय एवं प्रान्तीय सरकार के बजट कार्यकारिणी द्वारा तैयार किये जाते हैं तथा कार्यकारिणी द्वारा पास करवाये जाते हैं तथा इनके क्रियान्वयन का दायित्व भी कार्यकारिणी पर रहता है। स्थानीय संस्थाओं का बजट स्वतन्त्र होता है।

(7) सामान्य एवं संकटकालीन बजट–

सामान्य बजट प्रायः अपेक्षाकृत स्थायी प्रकृति के कार्यों से व्यवहार करते हैं, जबकि संकटकालीन बजट असामान्य या विशेष परिस्थितियों जैसे युद्ध, मन्दी आदि से सम्बद्ध होते हैं। दोनों के उत्तरदायित्व, भागीदारी और क्षमतायें अलग–अलग होती हैं। महिलाओं में अधिकारों के प्रति जागरूकता का अभाव, शिक्षा के अवसरों में कमी स्वतन्त्र निर्णय न ले पाना इत्यादि परिस्थितियों के कारण जैन्डर बजटिंग का भारत जैसे विकासशील देश में पर्याप्त महत्व है।

बजट घाटे की अवधारणा :–

आधुनिक युग में लोकतान्त्रिक सरकारों द्वारा प्रस्तुत बजट में विविध प्रकार के बजटीय घाटों को दशार्या जाता है, जिससे अर्थव्यवस्था के स्वरूप को समझने में सहायता मिलती है।

प्रो. डाल्टन – एक बजट घाटा पूर्ण है यदि एक दिये गये समय के अन्दर व्यय आय से अधिक है।

विभिन्न अवधारणायें :–

(अ) राजस्व घाटा :–

जब बजट के अन्तर्गत दर्शाये गये कुल राजस्व व्यय कुल राजस्व प्राप्तियों से अधिक होता है। तो वह अन्तर राजस्व घाटा कहलाता है। अर्थात् राजस्व घाटा बजट की राजस्व प्राप्तियों की अपेक्षा राजस्व व्यय के आधिक्य को व्यक्त करता है।

सूत्र :

राजस्व घाटा = राजस्व प्राप्तियाँ – राजस्व व्यय

उदाहरण – कुल राजस्व प्राप्तियाँ 1300 करोड़ – कुल राजस्व व्यय 1700 करोड़

अतः कुल राजस्व घाटा = 400 करोड़ रू.

सूत्र की व्याख्या –

राजस्व घाटा = (कुल कर राजस्व + कुल गैर कर राजस्व) – (राजस्व खाते में आयोजना भिन्न व्यय + राजस्व खातें में आयोजना व्यय)

(ब) राजकोषीय घाटा :–

प्रस्तुत बजट में राजकोषीय घाटा कुल राजस्व प्राप्तियों, गैर ऋण पूँजीगत प्राप्तियों के ऊपर सरकार के कुल व्यय (राजस्व व पूँजीगत व्यय, जिसमें उधार लिये गये शुद्ध ऋणों की राशि भी शामिल होती है) का आधिक्य है। स्पष्ट है कि बजट घाटे में उधार एवं अन्य समस्त देनदारियाँ जोड़ दे तो वह राजकोषीय घाटा कहलाता है। राजकोषीय घाटा अर्थव्यवस्था वर्तमान आर्थिक स्थिति का समग्र दर्पण होता है।

राजकोषीय घाटा = बजटीय घाटा + उधार + समस्त देनदारियाँ

(स) वित्तीय घाटा :–

वित्तीय घाटा, सरकारी कोष की वास्तविक स्थिति को व्यक्त करता है इसके अन्तर्गत बजट घाटे के साथ साथ सरकार की शुद्ध उधारी को भी जोड़ा जाता है।

(द) प्राथमिक घाटा :–

राजकोषीय घाटे में से ब्याज अदायगियों को घटाने के बाद जो राशि शेष बचती है उसे प्राथमिक घाटा कहा जाता है। अर्थात ब्याज की अदायगियाँ राजकोषीय घाटे में से निकाल दी जाये तो प्राप्त शेष को प्राथमिक घाटा कहा जाता है।

सूत्रः

प्राथमिक घाटा = राजकोषीय घाटा – ब्याज अदायगियां

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सरकारी बजट किसी भी अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने के लिये बहुत महत्वपूर्ण होता है। आधुनिक युग में तो सरकारी बजट सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को न केवल प्रभावित करता है बल्कि अर्थव्यवस्था को दिशा भी प्रदान करता है।

भारत में बजट की नवीन प्रवृतियां–

वित्तीय वर्ष 2016–17 के लिये केन्द्र सरकार का बजट प्रस्तुत करते हुये वित्तमंत्री अरूण जेटली ने राजकोषीय प्रशासन की व्यवस्था में सुधार के लिये सरकार के व्यय को योजनागत व्यय एवं गैर योजनागत व्यय में वर्गीकृत करने की प्रथा को समाप्त करने की घोषणा की है। 2017–18 से यह प्रथा समाप्त हो जायेगी और बजट को केवल राजस्व व्यय व पूँजीगत व्यय के रूप में ही वर्गीकृत किया जायेगा।

2016–17 के बजट में डिजिटल साक्षरता स्कीम, कालेधन

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

की घोषणा हेतु स्कीम, मेक इन इन्डिया सहित एक भारत–श्रेष्ठ भारत कार्यक्रम शुरू करने की घोषणा प्रस्तावित की गयी है।

सितम्बर 2016 में हुई भारत सरकार की केबिनेट मीटिंग के निर्णयानुसर अगले वित्तीय वर्ष में रेल बजट को भी अलग से प्रस्तुत नहीं किया जायेगा बल्कि इसे देश के आम बजट में एक मद के रूप में दर्शाया जायेगा।

केन्द्र एवं राज्य सरकारों में वित्तीय अनुशासन बनाये रखने के उद्देश्य से भारतीय संसद ने 7 मई 2003 को राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबन्धन अधिनियम FRBA Act पारित किया जिसमें प्रावधान किया गया है कि राजस्व घाटे को शून्य किया जाये।

केन्द्र और राज्यों के बीच राजस्व बटँवारे के मानक तय करने हेतु देश में वित्त आयोग समय–समय पर केन्द्र सरकार को सुझाव देता है। केन्द्र व राज्यों दोनों के राजस्व घाटे को शून्य स्तर पर लाकर राजकोषीय सुदृढ़त्रीकरण का सुझाव तेहरवें वित्त आयोग द्वारा दिया गया। वर्तमान में चौदहवाँ वित्त आयोग (जनवरी 2013 में गठित) वाई. वी. रेड्डी की अध्यक्षता में गठित किया गया है, जिससे प्राप्त रिर्पार्ट पर 2015 से 2020 तक क्रियान्वयन किया जा सकेगा।

भारतीय संविधान मे प्रतिवर्ष बजट को संसद द्वारा पास कराने की व्यवस्था करने से सरकारी मशीनरी द्वारा किये जाने वाले व्यय के लिये संसद की अनुमति की अनिवार्यता का प्रावधान संसद के नियन्त्रण को सर्वोच्चता प्रदान करता है।

आर्थिक नीति के उपकरण के रूप में बजट –

बजट को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आर्थिक नीति का एक महत्वपूर्ण उपकरण माना जाता है। बजट केवल अनुमानों के प्रस्तावक मात्र ही नहीं बल्कि भूतकाल के अनुभव पर आधारित भविष्य के लिये व्यापक योजना एवं कार्यक्रम है जो सरकार की आर्थिक एवं सामाजिक विचारधारा को प्रकट करता है। बजट सरकार की आर्थिक नीति का महत्वपूर्ण एवं आवश्यक उपकरण है। बजट राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास का अभिन्न अंग है। यह देश में अच्छित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सरकार के हाथों में अच्छा उपकरण है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- राजस्व बजट– इसके अन्तर्गत कर एवं शुल्क आदि से प्राप्त होने वाली सरकारी आय शामिल होती है तथा इनके संग्रह पर किया जाने वाला व्यय भी राजस्व बजट में शामिल होता है।
- पूँजीगत बजट– इसके अन्तर्गत सरकार द्वारा प्राप्त किया गया ऋण उस पर किया गया व्यय एवं सरकारी परिसम्पतियों से होने वाली आय तथा व्यय शामिल होता है।
- आम बजट एक देश की अर्थव्यवस्था का वार्षिक लेख–जोखा होता है।
- संसद में प्रस्तुत करने से पूर्व बजट को गुप्त रखा जाता है।
- वित्त आयोग का प्रमुख कार्य केन्द्र व राज्यों के बीच में राजस्व बँटवारा करना है।
- वर्ष 2017 से रेल बजट को आम बजट में शामिल कर लिया गया है।
- आधुनिक युग में बजट की सर्वाधिक लोकप्रिय अवधारणा घाटे का बजट है।
- राजकोषीय घाटा = बजटीय घाटा +उधार+समस्त देनदारियाँ
- सामान्यतया बजट एक वित्तीय वर्ष हेतु प्रस्तुत किया जाता है।
- जेन्डर बजटिंग का उद्देश्य महिलाओं के अधिकारों की जागरूकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. सन्तुलित बजट से आशय है–
   (अ) कुल आय > कुल व्यय
   (ब) कुल आय < कुल व्यय
   (स) कुल आय = कुल व्यय
   (द) कुल आय = 0 ( )
2. निम्न में से राजस्व प्राप्ति की मद नहीं है–
   (अ) कर आय (ब) लाभांश
   (स) अनुदान (द) गैर कर आय ( )
3. जनता की क्रय शक्ति में कमी करने हेतु सरकार का प्रमुख उपाय है–
   (अ) करों में छूट देना
   (ब) नये कर लगाना
   (स) सरकारी व्यय में वृद्धि करना
   (द) सब्सिडी देना ( )
4. जिस बजट में विगत व्ययों को आधार नहीं बनाया जाता, वह है–
   (अ) आम बजट (ब) घाटे का बजट

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(स) पूरक बजट (द) जीरोबेस बजट ( )

5. संसद में प्रतिवर्ष बजट पास करवाने की व्यवस्था से किसकी सर्वोच्चता सिद्ध होती है–

(अ) राष्ट्रपति (ब) प्रधानमंत्री

(स) संसद (द) वित्तमंत्री ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्व प्राप्तियों को दो भागों में बाँटा जाता है दोनों भागों के नाम लिखो।
2. राजस्व घाटा ज्ञात करने हेतु सूत्र लिखिये।
3. भारत में वित्तीय वर्ष की अवधि बताइये।
4. शून्य आधारिय बजट का जनक कौन है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. 'आम बजट' से आपका क्या आशय है?
2. बजट की तुलना जादू के पिटारे से की गयी है क्यो ?स्पष्ट करें।
3. बजट का बजट किसे कहा जाता है ?
4. प्राथमिक घाटे से आप क्या समझते हैं ?
5. यदि एक देश के बजट मे राजस्व घाटा 700 करोड़ रू. एवं कुल राजस्व व्यय 1800 करोड़ रू है तो राजस्व प्राप्तियाँ ज्ञात कीजिये।

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. बजट घाटे से आप क्या समझते है?इसकी विभिन्न अवधारणाओं को समझायें।
2. बजट को परिभाषित करते हुये इसके महत्व की विवेचना कीजिये।
3. राजस्व प्राप्तियाँ एवं राजस्व व्यय से आपका क्या आशय है?स्पष्ट कीजिये।
4. बजट से आपका क्या आशय है?जेन्डर बजटिंग को क्यों उपयोगी माना गया है?

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
स	स	ब	द	स

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अध्याय 24

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अवधारणाएँ
(Concept of International Trade)

प्रस्तावना –

वैश्वीकरण के इस युग में ऐसा कोई देश नहीं होगा जो अपने नागरिकों की जरूरतों की पूर्ति अपने उपलब्ध संसाधनों द्वारा कर लेता हो। लोगों में बढ़ती उपभोक्तावादी प्रवृत्ति किसी भी देश को अन्य देशों से वस्तुओं और सेवाओं के लेन–देन के लिए आकृष्ट करती है। ऐसे में किसी देश की बंद अर्थव्यवथा (Closed Economy) की कल्पना भी बेमानी होगी। आज का युग 'खुली अर्थव्यवस्था' (Open Economy) का युग है। प्रत्येक देश अपनी जनसंख्या की जरूरतों के लिए विभिन्न देशों के साथ व्यापार और अन्य आर्थिक लेन–देन में संलग्न हैं।

आइये हम इसके लिए सर्वप्रथम खुली और बंद अर्थव्यवस्था को समझने का प्रयास करते हैं।

बंद अर्थव्यवस्था –

यह एक ऐसे देश की अर्थव्यवस्था कही जा सकती है, कि जो दूसरे देश से कोई आर्थिक लेन–देन अथवा व्यापार नहीं करती है। इसके अन्तर्गत केवल देश में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं का ही उपयोग किया जाता है।

खुली अर्थव्यवस्था –

यह एक ऐसी अर्थव्यवस्था है, जिसमें अन्य देशों के साथ वस्तुओं और सेवाओं का परस्पर लेन–देन तथा वित्तीय परिसम्पत्तियों का भी व्यापार किया जाता है।

उदाहरण के लिए भारत में हम अन्य देशों से आयातित अनेक वस्तुओं एवं सेवाओं का उपयोग करते हैं। इसी प्रकार हमारे उत्पादन का कुछ भाग विदेशों को निर्यात भी किया जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अर्थ –

सामान्यतः व्यापार का अर्थ वस्तु और सेवाओं के क्रय विक्रय से होता है। व्यापार आन्तरिक और अन्तर्राष्ट्रीय होता है। आन्तरिक अथवा घरेलू व्यापार किसी भी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर विभिन्न क्षेत्रों के बीच में होता है। उदाहरण के लिए दक्षिण भारत से केला, चावल और नारियल समूचे भारत में आन्तरिक व्यापार के तहत भेजे जाते हैं। इसी प्रकार कश्मीर में उत्पादित सेव, मसाले, केसर इत्यादि भी ऐसे ही उदाहरण हैं। इसके विपरीत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार दो अथवा दो से अधिक देशों के बीच वस्तुओं और सेवाओं का विनिमय होता है। किसी देश की भौगोलिक सीमाओं के बाहर होने वाला व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है। उदाहरणार्थ भारत और अमेरिका के बीच होने वाला व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है। इसे सरल भाषा में विदेशी व्यापार भी कहते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की आवश्यकता–

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की आवश्यकता को हम निम्नलिखित बिन्दुओं से समझ सकते हैं–

1. सभी देश सभी प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन समान रूप से करने में सक्षम नहीं होते हैं, इसलिए आवश्यकता की वस्तुओं के लिए दूसरे देशों पर निर्भर रहना पड़ता है। उदाहरण के लिए तेल की आवश्यकता सभी देशों को होती है, किन्तु यह कुछ ही क्षेत्र में सीमित है। अतः इसका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार होता है।
2. विश्व में साधनों जैसे उर्वरा भूमि, खनिज सम्पदा, वनसम्पदा इत्यादि का असमान वितरण होता है। जलवायु भी असमान रहती है। उत्पादन के साधनों के बीच स्थानापन्न पूर्ण नहीं होता है। अतः प्रत्येक देश उस वस्तु के उत्पादन में विशिष्टीकरण करता है, जो साधन वहाँ प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इससे उसकी उत्पादन लागत कम होती है। लाभ अर्जित करने के लिए वस्तुओं का निर्यात करता है। इसके विपरीत अल्प संसाधनों और इनकी ऊँची कीमतों के कारण ऐसी वस्तुओं का दूसरे देशों से आयात करता है। इस प्रकार वह अपनी उत्पादन लागत कम करने का प्रयास करता है और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से लाभ अर्जित करता है।
3. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से आधुनिक टैक्नोलोजी प्राप्त होती है जिससे विकासशील और पिछड़े देशों का विकास सम्भव होता है।
4. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से घरेलू उद्योगों में भी प्रतिस्पर्धा बढ़ती है, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से अधिक लाभ कमाने के लिए वे अपने उत्पाद की गुणवत्ता और विक्रय मात्रा दोनों में वृद्धि करते हैं।
5. वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से प्राप्त आगम, सकल राष्ट्रीय उत्पाद का बड़ा अंश होता है। सभी विकासशील

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

देशों के विकास में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एक उत्तरदायी घटक रहा है।

महत्त्व

प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों द्वारा दी गई परिभाषा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व को बताती है–

जेकब वाइनर के अनुसार "विदेशी व्यापार कुछ अंश तक विशिष्टीकरण को जन्म देता है।"

वाल्टर क्रूसे "अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अधिक मनुष्यों को जीने की अनुमति देता है, विभिन्न रुचियों को प्रदान करके जनता को उच्च जीवन स्तर का आनन्द देता है जो शायद उसकी अनुपस्थिति में सम्भव नहीं होता।"

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के महत्व को निम्न बिन्दुओं से समझाया गया है–

1. उपभोक्ता, उत्पादक और विनियोगकर्त्ता को अधिक वस्तुओं के चयन का अवसर प्रदान करता है।
2. प्राकृतिक संसाधन का पूर्ण उपयोग होने में सहायक होता है।
3. प्रत्येक देश को विकास करने का समान अवसर प्रदान करता है।
4. प्राकृतिक आपदाओं में आवश्यक वस्तुओं को उपलब्ध कराने में सहायक होता है।
5. विकासशील देशों को वित्तीय सुविधा और आधुनिक टैक्नोलॉजी प्राप्त होने से तीव्र औद्योगीकरण की सम्भावनाएं बढ़ती हैं।
6. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से देशों में परस्पर सद्भावना बढ़ती है।

व्यापार संतुलन और भुगतान संतुलन

व्यापार संतुलन और भुगतान संतुलन में उल्लेखनीय अन्तर है। व्यापार संतुलन, भुगतान संतुलन का एक अंश है। प्रत्येक देश वस्तुओं और सेवाओं का आयात निर्यात करता है, कुछ मदें दृश्य होती है और कुछ अदृश्य। दृश्य वस्तुओं से तात्पर्य है भौतिक वस्तुएं, जिन्हें देखा और मापा जा सकता है। इन वस्तुओं के आयात और निर्यात मूल्यों को व्यापार सन्तुलन में शामिल किया जाता है। इस प्रकार व्यापार संतुलन केवल दृश्य वस्तुओं को ही शामिल करता है। यदि किसी देश के आयातों की तुलना में निर्यात अधिक होते हैं तो व्यापार सन्तुलन अनुकूल होता है। इसके विपरीत यदि निर्यातों की तुलना में आयात अधिक होते हैं तो व्यापार सन्तुलन प्रतिकूल होता है।

भुगतान सन्तुलन एक व्यापक अवधारणा है इसमें दृश्य और अदृश्य दोनों ही प्रकार की मदें शामिल होती है। अदृश्य मदों में सेवाएं जैसे बैकिंग, बीमा, तकनीकी ज्ञान आदि होती हैं। इनका भुगतान देशों के मध्य होता है। किन्तु बन्दरगाहों पर उनका कोई लेखा नहीं होता है। इसके अतिरिक्त इसमें पूंजी खाते को भी शामिल किया जाता है। कुछ प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों ने भुगतान संतुलन को इस प्रकार से परिभाषित किया है –

बोसोडर्स्टन के अनुसार – "भुगतान संतुलन किसी देश के लिए अन्तर्राष्ट्रीय लेन देन में प्राप्तियों और भुगतान को दर्ज करने

तालिका 24.1 भुगतान सन्तुलन लेखा

क्रेडिट (प्राप्तियाँ)			**डेबिट (भुगतान)**	
चालू लेखा				
क्र.स.	मदें	रु. करोड़	मदें	रु. करोड़
1.	वस्तुओं का निर्यात	300	8. वस्तुओं का आयात	400
2.	सेवाओं का निर्यात	100	9. सेवाओं का आयात	200
3.	विदेशी विनियोगों से आय	200	10. विदेशी विनियोगों से व्यय	100
4.	यूनिलैटरल (एक पक्षीय) प्राप्तियाँ (उपहार, दान आदि)	100	11. यूनिलैटरल (एकपक्षीय) भुगतान	100
		700		800
पूँजी खाता				
5.	दीर्घकालीन उधार लेना	200	12.दीर्घकालीन उधार देना	100
6.	अल्पकाल उधार लेना	200	13. अल्पकाल उधार देना	100
7.	स्वर्ण / परिसम्पत्ति विक्रय	100	14 स्वर्ण / परिसम्पत्ति खरीद	100
		500	15. अशुद्धियाँ और भूलचूक	300 100
	कुल योग	1200		1200

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

का तरीका मात्र है।"

भुगतान संतुलन को निम्न काल्पनिक तालिका के द्वारा सरलता से समझा जा सकता है।

उपरोक्त तालिका में व्यापार सन्तुलन में 100 करोड़ का घाटा दर्शाया गया है। वस्तुओं का निर्यात 300 करोड़ रुपये है, जबकि वस्तुओं का आयात 400 करोड़ रुपये है। किन्तु भुगतान सन्तुलन के दोनों पक्ष (क्रेडिट और डेबिट) 1200 करोड़ रुपये है। भुगतान संतुलन संतुलित है, यह सदैव संतुलित रहता है क्योंकि इसमें दृश्य और अदृश्य दोनों प्रकार की वस्तुएँ शामिल होती हैं।

विदेशी विनिमय दर का अर्थ

सेयर्स के अनुसार, "चलन मुद्राओं के परस्पर मूल्यों को ही विदेशी विनिमय दर कहा जाता है।"

हेन्स के अनुसार, "विनिमय दर एक मुद्रा की दूसरी मुद्रा के रुप में व्यक्त की गई कीमत है।"

सेयर्स और हेन्स की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि विनिमय दर वह दर है जिस पर एक करेन्सी दूसरी करेन्सी में परिवर्तित की जाती है। जैसे भारत का एक रुपया = 0.015 डॉलर के बराबर है। अथवा 1 यू.एस. डॉलर = 68.26 भारतीय रुपये। यदि कोई भारतीय पर्यटक अमरीका यात्रा के उद्देश्य से जाता है तो वहाँ अपनी दैनिक जरुरतों को पूरा करने के लिए भारतीय मुद्रा (रुपये) को डॉलर में बदलवाना होगा, 1 डॉलर के लिए उसे 68.26 रुपये देने पडेंगे। विनिमय विदेशी वर विनिमय बाजार में तय होती है।

विदेशी विनिमय बाजार – जहाँ दो अथवा अधिक देशों के मध्य उनकी मुद्राओं का विनिमय होता है। इस बाजार के प्रमुख ऐजेंट व्यावसायिक बैंक, अधिकृत डीलर और मुद्रा प्राधिकारी हो सकते हैं।

विनिमय दर कई प्रकार की होती हैं, जैसे अग्रिम, तत्काल, अनुकूल, प्रतिकूल, स्थिर और अस्थिर विनिमय दर।

विनिमय दर का निर्धारण

अर्थशास्त्रियों द्वारा विनिमय दर के निर्धारण के लिए मांग–पूर्ति सिद्धान्त, क्रय शक्ति समता सिद्धान्त, भुगतान शेष सिद्धान्त और टकसाल दर समता सिद्धान्त आदि प्रतिपादित किए गए हैं।

मांग पूर्ति सिद्धान्त

जिस प्रकार बाजार में कीमतों का निर्धारण उनकी मांग और पूर्ति के द्वारा होता है उसी प्रकार विदेशी विनिमय बाजार में भी विनिमय दर का निर्धारण विदेशी विनिमय की मांग और पूर्ति द्वारा निर्धारित होता है। एक सरल उदाहरण द्वारा हम इसे समझने का प्रयास कर सकते हैं। जैसे भारत में विदेशी विनिमय की मांग (डॉलर) इसलिए होती है कि भारत अमेरिका से वस्तुएँ एवं सेवाएँ आयात करता है। भारत इसके लिए अमरीका को पूँजी हस्तान्तरण करता है। जिसके बदले अमेरीकी डॉलर उपलब्ध कराता है क्योंकि आयातों का भुगतान डॉलर में किया जाता है।

डॉलर की मांग के वक्र का ढाल ऋणात्मक होता है अर्थात् विनिमय दर जितनी कम होगी, भारत में डॉलर की मांग उतनी ही अधिक होगी। अर्थात् भारत में अमरीका की वस्तुओं और सेवाओं के दाम सस्ते हो जाऐंगे। आयात मांग की लोच मांग वक्र को प्रभावित करती है।

पूर्ति – जब भारत वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात करता है तो अमेरिका से भारत को पूंजी भेजी जाती है। डॉलर के बदले रुपये दिए जाते हैं क्योंकि अमेरिका भारत को भुगतान रुपये में करता है। पूर्ति वक्र धनात्मक होता है जो प्रत्यक्ष सम्बन्ध को बताता है अर्थात् जैसे–जैसे विनिमय दर बढ़ती है तो रुपये की पूर्ति बढ़ जाती है। पूर्ति वक्र का ढाल पूर्ति की लोच द्वारा निर्धारित होता है।

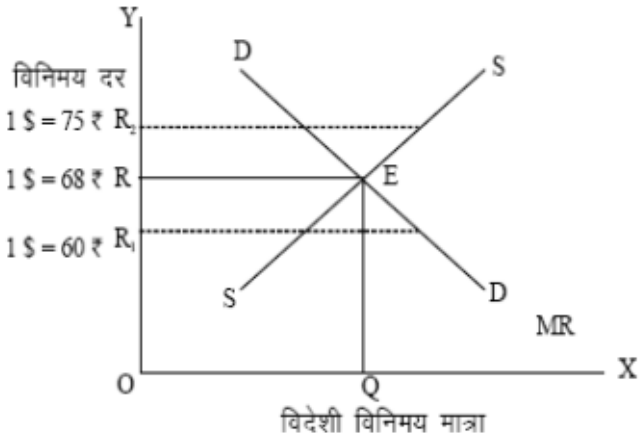

रेखाचित्र 24.1

चित्र में सन्तुलन E बिन्दु पर है जहाँ DD विदेशी विनिमय की मांग SS विदेशी विनिमय की पूर्ति के बराबर है। विदेशी विनिमय की मांग और पूर्ति OQ होती है। विनिमय दर OR है। + 68 निर्धारित होती है। यदि विनिमय दर OR_2 हो तो विदेशी विनिमय की पूर्ति मांग से अधिक होगी परिणाम स्वरूप विनिमय दर घटेगी और E पर साम्य होंगे। इसके विपरीत OR_1 पर विदेशी विनिमय की मांग विदेशी विनिमय की पूर्ति से अधिक है, जिससे विनिमय दर बढ़कर पुनः सन्तुलन E पर स्थापित होगा। भुगतान सन्तुलन इन लोचदार विनिमय दरों के कारण सन्तुलन की स्थिति में रहता है।

इस प्रकार विनिमय दरों में परिवर्तन से विदेशी विनिमय की मांग या पूर्ति में भी परिवर्तन आता है। इसके अन्य कई आर्थिक कारण भी उत्तरदायी हो सकते हैं जैसे आयात और निर्यात की मात्रा, देश की पूंजी का प्रवाह, बैंक दर, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजार में अनिश्चितता और देश का राजनैतिक वातावरण।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1. पाल एन्जिग के अनुसार अवमूल्यन से तात्पर्य मुद्राओं के अधिकृत समताओं में कमी करने से है।

अवमूल्यन (Devaluation) *और अधिमूल्यन* (Revaluation)

अवमूल्यन और अधिमूल्यन किसी देश के भुगतान संतुलन को समायोजित के आवश्यक उपकरण होते हैं।

अवमूल्यन किसी देश की सरकार द्वारा अपनी मुद्रा को विदेशी मुद्रा के सापेक्ष में मूल्य ह्रास करने की एक प्रक्रिया है। अवमूल्यन का अर्थ होता है जब कोई देश अपनी मुद्रा का बाह्य मूल्य कम करता है। सरकार ऐसा व्यापार घाटे को कम करने के लिये करती है, जिससे देश के आयात महंगे और निर्यात सस्ते हो जाते हैं। इस प्रकार सरकार अवमूल्यन के द्वारा भुगतान असंतुलन को दूर करने का प्रयास करती है।

अधिमूल्यन भी सरकार द्वारा भुगतान संतुलन को समायोजित करने के लिए अपनाया जाने वाला नीतिगत उपकरण है, जिससे देश की मुद्रा का मूल्य विदेशी मुद्रा के सापेक्ष में बढ़ा दिया जाता है। ऐसा करने से देश के निर्यात महंगे हो जाते हैं और आयात सस्ते हो जाते हैं। विदेशी मुद्रा की तुलना में रुपया महंगा हो जाता है और इसके द्वारा विदेशी व्यापार में आधिक्य को समाप्त किया जा सकता है।

अवमूल्यन और अधिमूल्यन दोनों ही मौद्रिक स्थिर विनिमय दर प्रणाली के अन्तर्गत किए जाते हैं। अधिमूल्यन अगर अस्थाई (तिरती) विनिमय दर प्रणाली के अन्तर्गत होता है तो उसे मुद्रा मूल्य वृद्धि (appreciation) कहते हैं।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- दो या दो से अधिक देशों के मध्य वस्तुओं और सेवाओं का विनिमय अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कहलाता है।
- अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से उपभोक्ता, उत्पादक और विनियोगकर्त्ता में वस्तुओं के चयन का विस्तार होता है।
- व्यापार संतुलन वस्तुओं (दृश्य) के आयात और निर्यात को शामिल करता है।
- भुगतान संतुलन में दृश्य और अदृश्य दोनों ही मदें शामिल होती हैं।
- विनिमय दर एक मुद्रा की दूसरी मुद्रा के रुप में व्यक्त कीमत होती है।
- विदेशी विनिमय की मांग और विदेशी विनिमय की पूर्ति बराबर होने पर विनिमय दर का निर्धारण होता है।
- अवमूल्यन से तात्पर्य है जब कोई देश अपनी मुद्रा की बाह्य मुद्रा कम करता है।
- अपने देश की मुद्रा का मूल्य विदेशी मुद्रा के सापेक्ष में बढ़ा देना अधिमूल्यन कहलाता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. विदेशी विनिमय बाजार को परिभाषित किया जा सकता है जहाँ–
   (अ) वस्तु का लेन–देन होता है
   (ब) विनिमय मुद्रा का लेन–देन होता है
   (स) साधनों का लेन–देन होता है
   (द) सेवाओं का लेन–देन होता है
2. निम्न में से कौनसी स्थिति व्यापार घाटे को दर्शाती है –
   (अ) आयात > निर्यात (ब) निर्यात = आयात
   (स) आयात < निर्यात (द) उपरोक्त कोई नहीं
3. एक देश द्वारा अपनी मुद्रा के बाह्य मूल्य को कम करने को कहते हैं –
   (अ) मूल्यह्रास (ब) अवमूल्यन
   (स) अधिमूल्यन (द) मुद्रा स्फीति
4. व्यापार संतुलन में शामिल होते हैं –
   (अ) सेवाओं का आयात
   (ब) सेवाओं का निर्यात
   (स) परिसम्पत्ति का आयात
   (द) वस्तुओं का आयात व निर्यात
5. यदि 1 डॉलर का मूल्य 65 रुपये से बदलकर 60 रु. कर दिया जाए तो यह कहलाएगा –
   (अ) अधिमूल्यन (ब) अवमूल्यन
   (स) मूल्यह्रास (द) मूल्य वृद्धि

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का क्या अर्थ है?
2. विदेशी विनिमय बाजार का अर्थ बताइये।
3. व्यापार का क्या अर्थ है?
4. व्यापार घाटा कब होता है?
5. विदेशी व्यापार का कोई एक महत्व बताइये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. अवमूल्यन को परिभाषित कीजिए।
2. अदृश्य मदें क्या होती हैं?
3. विनिमय दर का अर्थ बताइए।
4. दृश्य वस्तुओं से क्या अभिप्राय है?
5. बंद अर्थव्यवस्था किसे कहते हैं?

निबंधात्मक प्रश्न–

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1. विदेशी विनिमय दर के निर्धारण की प्रक्रिया को विस्तार से समझाइये।
2. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अर्थ बताइये। इसकी क्यों आवश्यकता होती है?
3. अवमूल्यन व अधिमूल्यन में अन्तर बताइये।
4. 'भुगतान संतुलन, व्यापार संतुलन से अधिक व्यापक अवधारणा है' स्पष्ट कीजिए।
5. एक काल्पनिक उदाहरण द्वारा भुगतान संतुलन की विभिन्न मदों को समझाइए।

उत्तर तालिका

1	2	3	4	5
ब	अ	ब	द	अ

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(शब्दावली)
Glossary

Average Fixed Cost (औसत स्थिर लागत) : कुल स्थिर लागत को उत्पादन से भाग देने पर प्राप्त होता है।

Aggregate supply curve (समग्र पूर्ति वक्र) : वह वक्र जो विभिन्न कीमतों पर उत्पादक द्वारा उत्पादित एवं बेची गई मात्रा को बताता है।

Aggregate-demand curve (समग्र मांग वक्र) : वह वक्र जो प्रत्येक कीमत पर उपभोक्ता, निवेशकर्ता, सरकार और विदेशी उपभोक्ता द्वारा वस्तु और सेवाओं की माँग को दर्शाता है।

Average Product (AP) (औसत उत्पाद): जब कुल उत्पाद को परिवर्तनशील पड़त की मात्रा से भाग दिया जाता है।

Average Revenue (AR) (औसत आगम): कुल आगम को कुल बेची गई मात्रा से भाग देने पर प्राप्त होता है।

Average Total Cost (ATC) (औसत कुल लागत): कुल लागत में कुल उत्पादन का भाग दिया जाता है। AFC+AVC

Average Variable cost (AVC) (औसत परिवर्तनशील लागत) : कुल परिवर्तनशील लागत को उत्पादन से भाग दिया जाता है।

Break even point (बिन्दु समस्थिति) : वह बिन्दु जिस पर कुल आगम और कुल लागत बराबर होती है व लाभ शून्य होता है।

Budget Constraint (बजट सीमा) : वस्तु की मात्रा के क्रय की सीमा जो उपभोक्ता की सीमित आय और वस्तुओं की कीमत द्वारा निर्धारित होती है।

Budget deficit (बजत घाटा) : जब सरकार को कर से प्राप्त आय उसके द्वारा किये गये व्यय से कम होती है।

Central Bank (केन्द्रीय बैंक) : एक शीर्ष संस्था जो सम्पूर्ण बैंकिंग प्रणाली को नियमित और नियंत्रित करती है।

Circular flow diagram (चक्रीय प्रवाह चित्र) : घरेलू और व्यावसायिक क्षेत्रों के मध्य साधनों और आय व्यय के प्रवाह को आलेख द्वारा दर्शाया जाता है।

Closed economy (बन्द अर्थव्यस्था) : जब किसी देश की अर्थव्यवस्था का अन्य देशों की अर्थव्यवस्था से कोई आयात–निर्यात (आदान–प्रदान) नहीं होता है।

Concept of Margin (सीमान्त की अवधारणा) : समस्त व्यष्टि अर्थशास्त्र की केन्द्रीय एकीकृत मूल धारणा है जिसके अनुसार सीमान्त लाभ सीमान्त लागत के बराबर होने पर कुल शुद्ध लाभ अधिकतम होता है।

Consumer equilibrium (उपभोक्ता संतुलन) : वह बिन्दु जहाँ उपयोगिता अथवा सन्तुष्टि अधिकतम होती है।

Consumption (उपभोग) : घरेलू वर्ग द्वारा वस्तु और सेवाओं पर किया गया व्यय।

Cost (लागत): एक वस्तु के उत्पादन पर उत्पादक द्वारा किए गए समस्त खर्च (व्यय)।

Cross price elasticity of demand : एक वस्तु की कीमत में अनुपातिक परिवर्तन होने पर दूसरी वस्तु की मांग में अनुपातिक परिवर्तन।

Demand curve (मांग वक्र) : मांग वक्र आलेख वस्तु की कीमत और मात्रा में सम्बन्ध को द्वारा दर्शाया जाता है।

Demand deposit (मांग जमा) : बैंकों के पास देशों (Balance) जो जमाकर्त्ताओं द्वारा आहरित किया जा सकता है।

Diminishing marginal utility of money (मुद्रा की ह्रासमान उपयोगिता): आय में प्रत्येक रूपये की वृद्धि से प्राप्त अतिरिक्त उपयोगिता घटती है।

Economic resources (आर्थिक संसाधन) : वे संसाधन जिनकी पूर्ति सीमित/अल्प होती है और इसलिए उनकी कीमत होती है।

Economics (अर्थशास्त्र) : अध्ययन की वह शाखा जो सीमित साधनों को उनके वैकल्पिक उपयोगों में आवंटित करती है जिससे मानवीय आवश्यकताओं को सन्तुष्ट किया जा सके।

Efficiency (कुशलता) : वह स्थिति जहाँ वस्तु की कीमत उस वस्तु की उत्पादन की सीमान्त लागत के बराबर होती है।

Elasticity (लोच): वस्तु की मांग अथवा पूर्ति का किसी एक निर्धारक घटक की प्रतिक्रियाशीलता का माप

Excess Demand : साम्य कीमत के नीचे जब वस्तु की मात्रा की मांग, वस्तु की पूर्ति से अधिक होती है।

Excess Supply (अतिरिक्त पूर्ति) : साम्य कीमत के ऊपर वस्तु मात्रा की पूर्ति उसकी वस्तु मात्रा की मांग से अधिक होती है।

Exchange (विनिमय) : वस्तु और सेवाओं का परस्पर लेन–देन

Exchange rate (विनिमय दर): वह दर जिस पर एक करेंसी में दूसरी मुद्रा की कीमत व्यक्त की जाती है।

Explicit Costs (व्यक्त लागतें) : फर्म द्वारा वास्तविक व्यय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जो पड़तों को क्रय करने में होता है।

Firm (फर्म) : एक संस्था जो लाभ के उद्देश्य से संसाधनों का सम्मिश्रण और संगठन करती है जिससे वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन कर के उनका विक्रय किया जाता है।

Giffen Goods (गिफ्फन वस्तुएं) : घटिया वस्तुएं जिनका धनात्मक प्रतिस्थापन प्रभाव, ऋणात्मक आय प्रभाव से कम होता है जिससे कीमत कम होने पर वस्तु की मात्रा कम खरीदी जाती है।

Gross Domestic Product (सकल घरेलू उत्पाद) : एक देश में एक वर्ष में उत्पादित सभी वस्तुओं और सेवाओं का अन्तिम बाजार मूल्य।

Human wants (मानवीय आवश्यकताएँ) : सभी वस्तुओं सेवाओं और मनुष्य की जीवनोपयोगी सभी मूलभूत आवश्यकताएं

Implicit Cost (अव्यक्त लागत) : फर्म के मालिक द्वारा स्वयं के संसाधनों उपयोग की लागत जो की अवसर लागत के आधार पर गणना की जाती है।।

Indifference Curve (तटस्थता वक्र) : वह वक्र जो वस्तुओं के विभिन्न संयोगों को दर्शाता है जिससे उपभोक्ता को समान सन्तुष्टि प्राप्त होती है और उनके मध्य तटस्थ रहता है।

Inferior Goods (घटिया वस्तुएं) : अन्य बाते समान रहने पर आय में वृद्धि किसी वस्तु की मांग में कमी करती है।

Inflation (मुद्रा स्फीति): अर्थव्यवस्था में सामान्य कीमत स्तर में वृद्धि

Investment (विनियोग) : पूंजीगत उपकरण, मालसूची (Inventories) पर किया गया व्यय।

Law of demand (मांग का नियम) : अन्य बाते समान रहने पर वस्तु की कीमत और वस्तु की मांग में विलोम संबंध को दर्शाता है।

Law of Supply : अन्य बातें समान रहने पर वस्तु की कीमत और पूर्ति में धनात्मक संबंध को व्यक्त करता है।

Longrun (दीर्घकाल) : वह समय अवधि जिसमें सभी साधन परिवर्तनशील होते हैं।

Macro Economics (समष्टि अर्थशास्त्र) : समग्र अथवा व्यापक अर्थव्यवस्था के आर्थिक चरों का अध्ययन

Marginal rate of Substitution (सीमान्त प्रतिस्थापन दर): वह दर जिस पर उपभोक्ता एक वस्तु की अतिरिक्त मात्रा प्राप्त करने के लिए दूसरी वस्तु की मात्रा त्यागने को तत्पर रहता है।

Marginal Revenue (सीमान्त आगम) : एक अतिरिक्त इकाई के विक्रय करने पर प्राप्त अतिरिक्त आगम

Marginal Utility (सीमान्त उपयोगिता) : एक अतिरिक्त वस्तु के उपभोग करने से प्राप्त अतिरिक्त उपयोगीता

Market (बाजार) : एक संस्थागत प्रबन्ध है जिसके तहत क्रेता और विक्रेतावस्तु और सेवाओं का विनिमय एक परस्पर सहमत कीमत पर करते है।

Market quilibrium (बाजार साम्य) : वह अवस्था जब बाजार कीमत पर वस्तु की मांग और पूर्ति दोनों बराबर होती है।

Micro economics (व्यष्टि अर्थशास्त्र) : जब सुक्ष्म अथवा व्यक्तिगत इकाई का अध्ययन किया जाता है।

Mixed economy (मिश्रित अर्थव्यवस्था) : अर्थव्यवस्था जिसमें निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्र होते हैं।

Monetary Policy (मौद्रिक नीति) : केन्द्रीय बैंक में नीति निर्माताओं द्वारा मुद्रा की पूर्ति पर नियंत्रण के उपाय

Money (मुद्रा): सर्वग्राही एवं वैधानिक वस्तु जो जनता द्वारा वस्तु और सेवाओं के क्रय के लिए प्रयोग की जाती है।

Money Supply (मुद्रा की पूर्ति) : अर्थव्यवस्था में मुद्रा की उपलब्ध मात्रा

Monopolistic Competition (एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता) : वह बाजार संरचना जिसमें अनेक फर्मे विभेदीकृत वस्तुओं का उत्पादन करती है।

Net Exports (शुद्ध निर्यात) : देश के कुल निर्यातों के मूल्य में से कुल आयातों के मूल्य को घटाने पर प्राप्त शुद्ध निर्यात

Non Price Competition (गैर कीमत प्रतियोगिता) : विज्ञापन और विभेदीकृत उत्पाद पर आधारित प्रतियोगिता होती है न की कीमत आधारित

Normal Good (सामान्य वस्तुएं) : अन्य बातें समान रहने पर आय में वृद्धि होने पर जिन वस्तुओं की मांग में वृद्धि होती है।

Oligopoly (अल्पाधिकार) बाजार संरचना जिसमें कुछ बडी फर्मे होती है। ये समरूप या विभेदीकृत वस्तुओं का उत्पादन करती है।

Open economy (खुली अर्थव्यवस्था) : अर्थव्यवस्था जिसका अन्य अर्थव्यवस्थाओं के साथ अंतःक्रिया होती है।

Ordinal Utility (क्रमवाचक उपयोगिता) विभिन्न वस्तुओं को वरीयता प्रदान करना उनसे प्राप्त उपयोगिता के आधार पर

Perfectly Competitive market (पूर्ण प्रतियोगिता बाजार): बाजार संरचना जिसमें क्रेता और विक्रेताओं की संख्या बहुत अधिक होती हे कोई भी कीमत को प्रभावित नहीं करता है। समरूप वस्तुओं का उत्पादन होता है।

Price Elasticity (मांग की कीमत लोच) : वस्तु की मांग मात्रा में अनुपातिक परिवर्तन और वस्तु की कीमत में अनुपातिक परिवर्तन का अनुपात

Production (उत्पादन) : संसाधनों अथवा पड़तों को वस्तु और सेवाओं में रूपांतरित करना है।

Production Possibility Curve (उत्पादन सम्भावना वक्र)

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

: वस्तुओं के विभिन्न संयोगों को दर्शाता है जो एक राष्ट्र में उपलब्ध तकनीकी के दिए होने पर सभी साधनों का पूर्ण उपयोग करते हुए उत्पादन करता है।

Reserve Ratio (रिजर्व अनुपात) : जमाओं का हिस्सा जो बैंक रिजर्व के रूप में रखते है।

Shortage (अल्पता) अभाव : स्थिति जब वस्तु की मांग वस्तु की पूर्ति से अधिक होती है।

Shut down point : उत्पादन का वह स्तर जिस पर कीमतें औसत परिवर्तनशील लागत के बराबर होती है और हानि कुल स्थिर लागतों के बराबर होती है। फर्म उत्पादन करे या न करे। इसके अतिरिक्त MC, AVC के न्यूनतम बिन्दु पर, बराबर होती है। MC = AVC

Subsitutes (प्रतिस्थापन वस्तु) : जब एक वस्तु की कीमत में वृद्धि दूसरी वस्तु की मांग में वृद्धि करती है।

Supply Curve (पूर्ति वक्र) : जब वस्तु की कीमत और पूर्ति मात्रा को आलेख द्वारा दर्शाया जाता है।

Total Fixed Cost (कुल स्थिर लागत) : स्थिर साधनों पर किया गया व्यय।

Total Revenue (कुल आगम): बाजार में विक्रेताओं को प्राप्त राशि / कीमत को वस्तु मात्रा से गुणा करने पर कुल आगम प्राप्त होता है।

Total Utility (कुल उपयोगिता) : वस्तु की सभी इकाइयों के उपभोग करने पर प्राप्त उपयोगिता

Util (यूटिल): उपयोगिता को मापने की काल्पनिक इकाई

Utility (यूटिलिटी, उपयोगिता) : वस्तु में वह क्षमता जो मानवीय आवश्यकता को तृप्त कर सकती है।

Variable inputs (परिवर्तनशील पड़ते) : वह उत्पादन के साधन जिनमें एक निश्चित समय अवधि में परिवर्तन किया जा सकता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com